झाजी..
जी का जंजाल

व्यंगकार : हेमंत कुमार झा

BlueRoseONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Hemant Kumar Jha 2026

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

For permissions requests or inquiries regarding this publication, please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7825-712-4

Cover design: Anuj
Typesetting: Tanya Raj Upadhyay

First Edition: June 2026

प्रस्तावना

अपनी बात: जंजाल से मुस्कुराहट तक

अक्सर लोग मुझसे पूछते हैं कि 'समदृष्टि' से मेरा क्या अभिप्राय है? सरल शब्दों में कहूँ तो, सबको समान दृष्टि से देखना और महसूस करना ही इसका मूल है। लेकिन इसका एक गहरा और निजी कारण भी है—मेरे बेटे संकल्प और बेटी दृष्टि के नामों के मेल से ही 'समदृष्टि' का जन्म हुआ। मेरे लिए यह केवल एक उपनाम नहीं, बल्कि एक प्रतिज्ञा है कि मैं समाज के ऊंच-नीच, पुराने ज़माने की सादगी और नए दौर की चकाचौंध को एक समान धरातल पर तौल सकूँ।

अब उम्र के इस पड़ाव पर, जब बालों की सफेदी स्थायी हो चली है, लोग पूछते हैं कि ये व्यंग्य और कार्टून सूझते कहाँ से हैं? सच तो यह है कि व्यंग्य कहीं बाहर नहीं, बल्कि हमारी रोज़मर्रा की विसंगतियों में ही छिपा है। बस ज़रूरत है उसे एक 'समदृष्टि' से देखने की।

बचपन की रेखाएँ और बैंक का जंजाल

कार्टून का शौक मुझे छठी कक्षा से ही था। पड़ोस के घर में 'टाइम्स ऑफ़ इंडिया' केवल इसलिए देखने जाता था ताकि आर.के. लक्ष्मण जी के जादुई कार्टून देख सकूँ। तब अंग्रेज़ी नहीं आती थी, पर उन रेखाओं का आकर्षण ऐसा था कि पड़ोसी मज़ाक में पूछते— "पढ़ना आ गया?" और मैं कहता— "मैं तो बस ये कार्टून देखने आता हूँ।" लक्ष्मण जी का 'Common Man' और शरद जोशी जी की पैनी लेखनी (विशेषकर बात को '.....' करके पाठक के विवेक पर छोड़ देना) मेरे जीवन के मार्गदर्शक रहे।

बैंकिंग करियर के 36 वर्षों के दौरान, ऑडिट के लक्ष्यों और क्लोजिंग के जंजालों के बीच यह लेखन और रेखांकन ही मेरी 'थैरेपी' रही। रिटायरमेंट के बाद जब दुनिया को 'समदृष्टि' से देखा, तो पाया कि असली जंजाल तो अब शुरू हुआ है—कभी EMI के रूप में, कभी 'श्रीमती जी' के लक्ष्यों के रूप में, तो कभी डिजिटल इंडिया की 'गूगली' के रूप में।

प्रेरणा और यथार्थ

लोग पूछते हैं कि मेरे व्यंग्य का मुख्य 'टारगेट' श्रीमती जी ही क्यों होती हैं? सच तो यह है कि एक व्यंग्यकार के लिए उसका अपना घर ही सबसे बड़ी प्रयोगशाला है। उनके 'होम-मिनिस्टर' वाले तेवर ने ही मुझे सिखाया कि आपदा को हास्य में कैसे बदला जाता है। हालांकि, यह मेरा लेखकीय 'जंजाल' ही है; असल में वह अत्यंत सौम्य स्वभाव की हैं, जिनके सहयोग के बिना यह यात्रा अधूरी रहती।

इस सृजन यात्रा के असली मार्गदर्शक मेरे पिता, स्व. श्री धनपत राय झा रहे हैं। वे मेरे प्रेरणा स्तंभ हैं, जिनके संस्कारों ने मुझे अपनी गलतियों पर भी खुलकर हँसने का साहस दिया। साथ ही, ऑस्ट्रेलिया निवासी अंकल श्री हरिहर राय झा, श्री प्रमोद राय झा, श्रीकांत झा, बहन श्रीमती रेखा नागर और भाई गुंजन के निरंतर प्रोत्साहन ने ही 'झाजी' की इन बातों को कागज़ पर उतारने की हिम्मत दी।

इस पुस्तक के माध्यम से मेरा प्रयास है कि जब आप इन रेखाओं और शब्दों को पढ़ें, तो आपको अपना ही कोई 'जंजाल' याद आए और आप उस पर ठहाका मारकर हँस सकें। जंजाल तो जारी रहेगा, पर उसे 'लाइट' लेना ही हमारी जीत है।

— हेमंत "समदृष्टि" झा

समर्पण

"मेरे प्रेरणास्रोत, व्यंग्य के शिखर **शरद जोशी** जी और रेखाओं के जादूगर **आर.के. लक्ष्मण** जी के चरणों में सादर समर्पित. आप यह मान लीजिए कि ये मेरे लिए विभिन्न विधाओं में मेरे लिए द्रोणाचार्य और मैं एकलव्य होकर इन्हें सामने रखकर ही इस कला को सिखने का प्रयास कर रहा हूँ. यह संकलन उन आम आदमियों के नाम, जो हर जंजाल को एक मुस्कुराहट के साथ जीत लेते हैं."

कह रही हूँ... सीधे सीधे उतर जाओ.... ये भी आता है....

कानूनी स्पष्टीकरण
(Disclaimer)

"इस पुस्तक में संकलित सभी व्यंग्य और कार्टून्स पूर्णतः काल्पनिक हैं. इनका उद्देश्य किसी भी व्यक्ति, धर्म, जाति, संस्था या राजनीतिक दल की भावनाओं को ठेस पहुँचाना नहीं, बल्कि केवल स्वस्थ मनोरंजन और सामाजिक विसंगतियों को उजागर करना है. यदि किसी जीवित या मृत व्यक्ति से कोई समानता पाई जाती है, तो वह मात्र एक सुखद संयोग होगा."

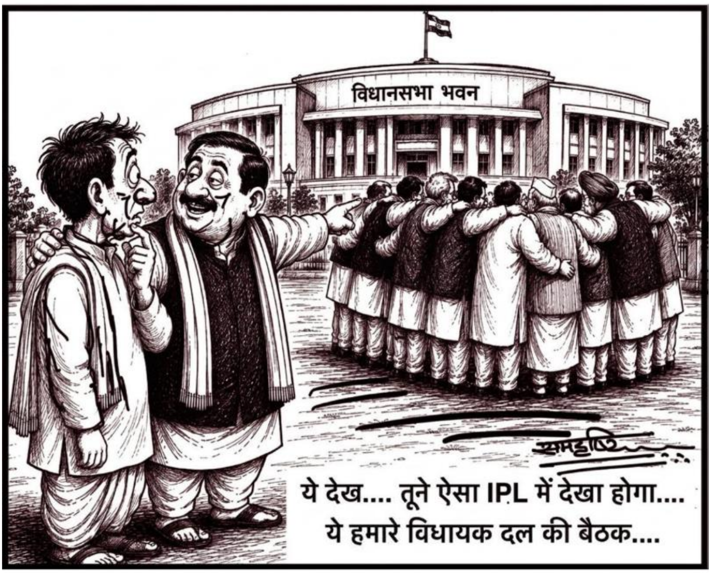
विधानसभा भवन
ये देख.... तूने ऐसा IPL में देखा होगा....
ये हमारे विधायक दल की बैठक....

आशीर्वचन

हास्य–व्यंग्य के साथ ही कार्टून पर आधारित यह पुस्तक आज के जीवन की विसंगतियों को हँसी और व्यंग्य के माध्यम से सामने लाती हैं। पुस्तक में हास्य और व्यंग्य दोनो बढ़िया हैं। भाषा में धारा-प्रवाह भी अच्छा है। जगह जगह पर शालीनता से चुटकी ली है।

लेखक ने हल्के-फुल्के हास्य के साथ मुख्यत: सामाजिक, पारिवारिक और साथ ही राजनैतिक परिवेश की विडंबनाओं को अच्छी तरह पकड़ा है कि पाठक मुस्कुराता भी है और सोचने के लिए प्रेरित भी होता है।

“ऐ आई” की आफत हो या “बजट और आम आदमी” व्यंग्य की विशेषता यह है कि इसमें हास्य लेख के साथ बंधा कार्टून एक बहुस्तरीय अनुभव रखता है। व्यंग्य आलेख में कही बात कार्टून में एक दृश्य देती है जो आलेख के शब्दों को एक चित्र देती है। पाठक व्यंग्य की धारा में बहता रहता है क्योंकि भाषा सरल और बोलचाल की है। नए पाठक इसे आसानी से अपना सकते हैं।

समदृष्टि नाम के अनुकूल इसमें संतुलन है; आक्रोश या तीखी भाषा नहीं बस हास्य के माध्यम से लेखक गहरी बात कह देता है।

मुझे विश्वास है इस पुस्तक का हास्य-व्यंग्य की दुनिया में भरपूर स्वागत होगा।

-हरिहर झा

तुम्हारे वेतन रजिस्टर के अनुसार मुझे हर महीने कट मनी.... ही मिली है....

अनुक्रमाणिका

सपना: आधार का 'पिता' और लोकतंत्र का 'पुत्र' 1
सपना: आधार का 'पिता' और लोकतंत्र का 'पुत्र' 3
रेती पर बिछा प्रोटोकॉल: सिंहासन बनाम मजिस्ट्रेट.............................. 8
पहचान का 'पार्लर' संकट और मेरी सफेदी.. 12
रील की बीमारी, दिल पर भारी.. 16
सरकारी लंच—एक 'ब्रह्मांडीय' विश्राम 20
"ऐ आई" की आफत 24
किस्त-किस्त में मरता मिडिल क्लास... 28
स्वच्छता अभियान: फोटो खिंचने तक की सफाई.............................. 32
सब्सिडी, मशीन और कान का कच्चापन.. 36
टारगेट—दफ्तर की फाइल से घर के जाले तक 38
एक 'स्पेस' का चक्कर और डॉक्टर साहब का सन्नाटा........................ 42
सीमा पार का संस्कार और स्वदेशी पिचकारी.................................. 46
रिमोट कंट्रोल और श्रीमती जी की 'गूगली'.. 49
रूठने का 'पेटेंट' और माघ का जबरन स्नान....................................... 52
आम आदमी, हीलिंग और श्रीमती जी का 'घूरना' 54
ट्रंप साहब की हसरत और मेरा 'ग्रीनलैंड' 56
घर का 'लोकतंत्र' और मेरा वेतन रजिस्टर 58
बजट और आम आदमी.. 62
पुलिस का सॉफ्टवेयर और घर की 'नागरिकता'................................. 66

अटल जी का 'प्रसाद' और श्रीमती जी का ब्रह्मास्त्र 68
'ननकू' जासूस और घर से निर्वासन 72
ननकू का 'नल-जल' मिशन और झाजी की बाल्टी 74
'मन की बात' और झाजी का अंडरग्राउंड मिशन 76
ननकू का संबोधन और घर की 'सुप्रीम बॉस' 78
अस्पताल का 'नूर' और श्रीमती जी का डिस्चार्ज 80
चांदी जैसे बाल और पेंशन का 'कंगाल' हाल 82
हुस्न का दीदार और 'बुआजी' का अवतार 84
तिल के लड्डू और 'दान' की गरिमा 86
'युवा दिवस' और झाजी का सफाई अभियान 88
समदृष्टि भवन और बिना विभाग का 'मालिक' 90
बीजेपी के नारे और 'विभाजित' झा जी 92
7 डिग्री का टॉर्चर और उम्र का 'नम्बर' गेम 94
गैर-परिवारवादी बॉस और घर का 'शाश्वत' नेतृत्व 96
'वाह क्या सीन है'— लाइव न्यूज़ का जंजाल 98
ननकू का 'बॉस' संबोधन और श्रीमती जी का बेलन 100
वेनेजुएला का तेल और झा जी का 'खूफिया' मिशन 102
कटी पतंग और छत वाली पर 'नज़र' 104
घर की तीसरी आँख और फेसबुक फ्रेंड 106
डिजिटल निमंत्रण 108
गैस की राजनीति और मेरा सिलेंडर 112
शादी, शंका और 'गैस' का गणित 116
गूगल मैप्स और 'गैस' का संकट 120

घर की संसद 124
पेट्रोल के दाम और मेरी खटारा साइकिल 126
आंगन प्रीमियर लीग 130
बुलेट ट्रेन और हमारा 'देसी' मिजाज़ 136
जांच का राष्ट्रीय और घरेलू मॉडल.. 140
प्रजातंत्र का 'पारदर्शी' प्रदर्शन 144
अदालत, दाना, कबूतर और पंचवर्षीय तृप्ति 148
साहब का AI और सुदामा की झाड़ू.. 152

ए डोबी..... ये सोने के लिए थोड़ी ना कहा.........

सपना: आधार का 'पिता' और लोकतंत्र का 'पुत्र'

सपना: आधार का 'पिता' और लोकतंत्र का 'पुत्र'

साथियों ज़िन्दगी भी एक अजीब पहेली है कभी क्या सोंचते हैं और क्या होता है. कई बार ऐसा महसूस होता है उपरवाला भी इसी ताक में रहता है **कब झा भाई घर से बाहर निकलें और समस्या की गठरी उसके सर...**

मैं एक छोटी बुद्धिवाला आदमी फिर भी पप्पू पानवाले की गुमटी पर अपना ज्ञान बाँट रहा था. मेरी नज़र सामने गली के एक 'छुटभैया नेता' ननकू पर पड़ी, जिसकी सफेद कमीज के कॉलर पर पान की पीक और चेहरे पर 'देश बचाने' की फर्जी चमक थी। मेरी तरफ इशारा किया "आओ झा जी.. आज आपकी क्लास ले लें...."| उसने जेब से एक आधार कार्ड निकाला और पूछा इसमें फोटो कैसा है? मेरी उम्र और बालों की सफेदी ने भावनाएँ रोक लीं। मैंने शालीनता से कहा...."सुंदर है।" वह तुरंत बोला...."जानते हो इसके पिता का नाम और तुम्हारा नाम एक ही है।"

मैंने कहा...."शब्दकोश में इतने नाम नहीं जितनी आबादी है, नाम कॉमन हो सकते हैं।". अब उसकी बारी थी। उसने एक और आधार कार्ड निकाला...."ये फोटो किसका है?"

मैं बोला...."अरे, ये तो मेरा है!" वह झट से बोला...."तो मानते हो कि ये आपकी …" और वह कार्ड मेरे हाथ पर रख दिया। मेरे पैरों तले ज़मीन खिसक गई। उस मॉडल के आधार कार्ड पर पता वही था....जो मेरा था… और वह पता कहीं और का था। मैंने अपना आधार कार्ड निकाला, आँखें मलीं, तीन-चार बार देखा....और पाया कि **मैं खुद एक हूँ, पर दस्तावेज़ों में दो जगह मौजूद**

मैंने ननकू से कहा...."अरे, तू तो बरसों से मुझे जानता है। याद है सर्दी में एक दिन तेरा मुँह साफ़ किया था?" वह नेता-टाइप अंदाज़ में बोला...."समय आने

पर मैं बाप को नहीं पहचानता, तुम क्या चीज़ हो!"| फिर दार्शनिक मुद्रा में कान खुजाते हुए बोला....**"सिस्टम कन्फ्यूज़ नहीं होता, नागरिक होता है।"**

"देख लीजिए जनता जनार्दन!" वह चिल्लाया, "इस मॉडल के आधार कार्ड पर पिता के नाम की जगह इस शरीफ दिखने वाले आदमी का नाम दर्ज है! ये है असली 'मॉडल' घोटाला!" मैं हक्का-बक्का था। मैंने गिड़गिड़ाते हुए कहा, "भाई , मेरा इस सुपरमॉडल से क्या लेना-देना? मैं तो खुद महीने के राशन के लिए अंगूठा घिसते-घिसते अपनी पहचान खो चुका हूँ। यह तकनीकी त्रुटि (Technical Error) है!"| लेकिन ननकू कहाँ मानने वाला था? उसने दूसरा बम फोड़ा...."अरे, त्रुटि नहीं, मिलीभगत है! तेरा खुद का एक आधार कार्ड इस मॉडल के पते पर पाया गया है। दाल में कुछ काला नहीं, पूरी दाल ही काली है!"

तभी एक जीप रुकी। दो प्रशासनिक अधिकारी उतरे साथ में दो सिपाही, और मुझे समन थमा दिया। ऊपर लिखा था....'चुनाव आयोग'। आरोप था कि **मैंने वोट बैंक की खातिर 'काल्पनिक रिश्ते' बनाए हैं।**

अब अधिकारी ने ज्ञान देना शुरू किया...."आजकल महँगाई बहुत है। एक तनख़्वाह में गुज़ारा मुश्किल। कभी सब्ज़ी लें, कभी बच्चे का दूध… और ये देखिए, श्रीमान जी—दो-दो परिवार!". इसी बीच श्रीमती जी भी वहाँ आ धमकीं। यह सुनते ही श्रीमती जी का रौद्र रूप… मैं यहाँ बयान नहीं कर सकता।

तभी खबर मिली....ननकू मेरे और उस मॉडल के आधार कार्ड लेकर प्रेस कॉन्फ्रेंस कर रहा है। मैं अधिकारी के सामने गिड़गिड़ाया...."साहब, यहीं पैदा हुआ, यहीं नौकरी की।". साहब बोले...."तुम क्या कहना चाहते हो? मेरा जन्म कहीं ओर हुआ और नौकरी यहाँ तो मुझे दो परिवार का लाइसेंस मिल गया?".

मैंने सारे देवी-देवताओं की शपथ ले ली, पर जवाब एक ही था...."**जहाँ दस्तावेज़ हों, वहाँ भावनाएँ मान्य नहीं।**"

पुलिस वाले ने डंडा फटकारते हुए कहा, "चलो भाई साहब, थाने में ही अपनी 'मॉडल' वाली वंशावली समझाना। वहाँ चुनाव आयोग के ऑब्जर्वर साहब इंतज़ार कर रहे हैं।". मुझे पुलिस वैन में बैठाया ही जा रहा था कि मैं फिसल कर गिर पड़ा। आँख खुली। देखा....श्रीमती चाय बना रही थीं। चाय देते हुए हल्की मुस्कान और शर्म के साथ बोलीं....“लोग भी कैसे होते हैं… दो-दो परिवार, दो-दो आधार कार्ड…”अब उन्हें कौन बताए....अभी-अभी मैंने भी यही सपना देखा था।मैंने मुँह बंद रखना ही उचित समझा।

मैं यही सोंच रहा था.... नाराज़ हो गए क्या... जो भाव नहीं बढ़ाया...

Vim

रेती पर बिछा प्रोटोकॉल: सिंहासन बनाम मजिस्ट्रेट

रेती पर बिछा प्रोटोकॉल: सिंहासन बनाम मजिस्ट्रेट

साथियों, हमारे देश में दो ही चीज़ें सबसे ज़्यादा 'अस्थिर' हैं....एक तो गंगा की रेती और दूसरा उस रेती पर तैनात मजिस्ट्रेट की नौकरी। माघ मेले में श्रद्धालु तो 'मोक्ष' की तलाश में आता है, पर बेचारा प्रशासनिक अधिकारी केवल 'स्पष्टीकरण' से बचने की तलाश में रहता है। तो आइए, आज इसी रेती, राजनीति और 'सिंहासन' के त्रिकोण की बात करते हैं..."

माघ मेले में तैनात प्रशासनिक अधिकारी की स्थिति उस सर्कस के मास्टर जैसी होती है, जिसे एक साथ दस शेर काबू करने हैं और वह भी तब, जब शेर और दर्शक दोनों ही मोक्ष पाने के लिए उतावले हों।

यह मेला दरअसल आस्था का वह समुद्र है जिसमें एक तरफ 'पुण्य' तैरता है और दूसरी तरफ 'प्रशासन' डूबता रहता है। प्रशासनिक अधिकारी के लिए यह मेला कोई धार्मिक आयोजन नहीं, बल्कि एक **'एनुअल एग्जाम'** है, जिसमें वह परीक्षक भी खुद है और परीक्षार्थी भी।

मित्रों, माघ मेले की रेती पर जब धर्म और प्रशासन का आमना-सामना होता है, तो दृश्य देखने लायक होता है। वहाँ दो ही ताकतें हैं....एक तरफ वह **उच्च सिंहासन** है, जिसकी मर्यादा शास्त्रों से तय होती है, और दूसरी तरफ हमारा **मजिस्ट्रेट साहब**, जिसकी पूरी कायनात 'प्रोटोकॉल' के सरकारी पन्नों में सिमटी है।

अधिकारी महोदय के लिए गंगा जी का पानी **'अमृत'** बाद में है, पहले वह **'क्यूसेक'** और **'जल-स्तर'** का वह आंकड़ा है, जो किसी भी वक्त उनके करियर की नाव डुबो सकता है। श्रद्धालु डुबकी लगाकर **'पुण्य'** बटोरता है, पर बेचारा अधिकारी फाइल पर साइन करके यह सुनिश्चित करता है कि कहीं उस पुण्य के रेले में 'सिस्टम' का दम न घुट जाए!

मजेदार बात देखिए... जिस व्यवस्था को अध्यात्म की ऊंचाई होना चाहिए था, प्रशासन उसे 'लॉ एंड ऑर्डर' की समस्या मानकर देख रहा है। उधर सिंहासन से एक मौन इशारा होता है, और इधर साहब के वायरलेस में 'अड़ंगा' लग जाता है। साहब वायरलेस पर चिल्लाते हैं....***'सर, सेक्टर 4 में मर्यादाओं का प्रश्न खड़ा हो गया है!'*** अब साहब पसीना पोंछ रहे हैं। उन्हें पता है कि शास्त्रों का समाधान तो पंचांग में मिल जाएगा, पर इस 'अड़ंगे' का समाधान किस सरकारी मैनुअल में ढूँढें?

वहाँ रेती पर तैनात साहब की हालत उस **'ट्रैफिक लाइट'** जैसी है, जो लाल तो है, पर जिसे देखकर कोई रुकता नहीं। सबको स्वर्ग पहुँचने की जल्दी है! साहब के एक हाथ में **'शो-कॉज नोटिस**' का डर है और दूसरे में **'वीआईपी ड्यूटी'** का तनाव । वे समझ नहीं पाते कि वे इस मेले के 'प्रबंधक' हैं या उस पुरातन व्यवस्था के 'बंधक', जहाँ तर्क नहीं... केवल संकेत चलते हैं।

अधिकारी बुदबुदाते हैं....**'गंगा की धारा को मोड़ना शायद आसान है, पर इन संकेतों के बीच बिना सस्पेंड हुए निकल जाना ही असली अश्वमेध यज्ञ है।'.**

अंत में, जब सूरज ढलता है, श्रद्धालु पुण्य लेकर लौट जाता है, उच्चासन अपनी महिमा लेकर। रह जाता है वह अधिकारी, जो अपनी वर्दी की रेत झाड़ते हुए बस एक ही दुआ करता है....**'हे गंगा मइया, अगली बार मेरी ड्यूटी किसी ऐसे दफ्तर में लगाना जहाँ सिर्फ फाइलें बोलती हों... इंसान और उनके विशिष्ट सिंहासन नहीं!'**

क्योंकि साहब... **शास्त्रों के अनुसार पाप गंगा में धुलते होंगे, पर सरकारी रिकॉर्ड के पाप तो सिर्फ 'स्पष्टीकरण' से ही धुलते हैं!**

पहचान का 'पार्लर' संकट और मेरी सफेदी

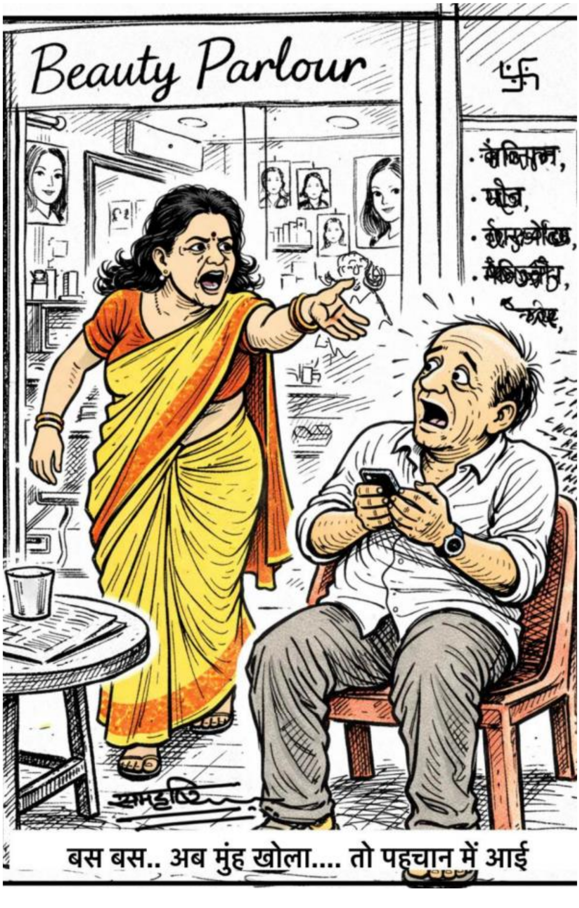

पहचान का 'पार्लर' संकट और मेरी सफेदी

साथियों, उम्र का बढ़ना और पहचान का बने रहना—दोनों अलग-अलग बातें हैं। अब मुझे ही देख लीजिए, मेरी उम्र और मेरे बालों की सफेदी ने मुझे बहुत कुछ सिखाया है, लेकिन उस दिन जो हुआ, उसने तो 'दार्शनिक' ही बना दिया।

पिछले दिनों श्रीमती जी को लेकर मैं ब्यूटी पार्लर गया था। साहब, वहाँ का नियम बड़ा सख्त है—आदमियों का प्रवेश वर्जित! ऐसा लगा जैसे किसी 'नो मेन्स लैंड' में आ गया हूँ। अब आदमी करे तो क्या करे?

बाहर स्टूल पर बैठकर इधर-उधर ताका-झांकी करने और अपनी ही किस्मत पर रोने के अलावा कोई चारा नहीं था।

हद तो तब हो गई जब वहाँ से एक पुराने मित्र गुज़रे। मुझे उस पार्लर के बाहर अपराधी की तरह स्टूल पर बैठा देख ठिठक गए। अपनी सफेद दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए बोले....'क्यों झा जी! अब ये उम्र तो नहीं बची यहाँ बैठकर आँखें सेंकने की? घर जाइए, ये तीर्थस्थल आपके लिए नहीं है!'

मैंने भी मज़किये अंदाज़ में कह दिया....'भाई साहब, आँखें सेंक नहीं रहा हूँ, बल्कि ये देख रहा हूँ कि जो अंदर श्रीमती जी 'कच्ची सामग्री' के रूप में गई हैं, वो बाहर 'फिनिश्ड प्रोडक्ट' बनकर कैसी निकलती हैं! यहाँ तो बस विधाता के काम में विज्ञान की दखलंदाजी का इंतज़ार कर रहा हूँ।'

करीब दो घंटे बीत गए। सन्नाटे में एक अजीब सा विचार आया—55 वर्ष की उम्र में जब वो दो घंटे के 'कायाकल्प' के बाद बाहर निकलेंगी, तो क्या मैं उन्हें पहचान पाऊँगा?

तभी एक भद्र महिला बाहर निकलीं। चेहरे पर इतना 'नूर' और इतनी चमक कि मैंने सोचा, शायद यही मेरी अर्धांगिनी हैं। मैं उत्साह में पास गया, तो उन्होंने

मुझे ऊपर से नीचे तक ऐसे देखा जैसे मैं किसी पुराने जमाने का पुरावशेष (Antique) होऊँ। और फिर तिरस्कार से बोलीं....**'ताऊजी, आप कौन?'**

साहब, मेरी हालत उस फटे हुए पुराने नोट जैसी हो गई जिसे बैंक वाले भी लेने से मना कर दें। अपनी उम्र की ऐसी फजीहत मैंने कभी नहीं देखी थी! मैंने सोचा, अब दोबारा बेइज्जती नहीं करानी है, सो चुपचाप बैठा रहा।

थोड़ी देर बाद एक और महिला निकलीं। अब मैं सावधान था, बिल्कुल चुप! लेकिन तभी उस भद्र महिला ने सिंह गर्जना की....**'सुनते नहीं हो... इतनी देर से खड़ी हूँ!'**

आवाज़ वही जानी-पहचानी थी, बस चेहरा किसी विदेशी फिल्म के डबिंग कलाकार जैसा लग रहा था। मैंने मासूमियत से कहा....**'देवी, क्या करूँ? जब चेहरे की पहचान ही 'बातों के अंदाज़' से होने लगे, तो समझ लेना चाहिए कि विज्ञान जीत गया और विधाता हार गया!'**

रील की बीमारी, दिल पर भारी

रील की बीमारी, दिल पर भारी

आजकल जिसे देखो, उस पर रील का जुनून सवार है। न उम्र की सीमा है, न मर्यादा का बंधन। एक बात कहूँ किसी से कहना मत, अभी कल ही की बात है सुबह नींद खुली ही थी कि मेरी नज़र श्रीमती जी पर पड़ी। मुझे कुछ 'परिवर्तन' सा महसूस हुआ और ध्यान से देखा, तो कलेजा मुँह को आ गया। मन में पहला विचार यही आया कि भाई, अब इस उम्र में ऐसी क्या 'गुड न्यूज़' हो सकती है?

मैंने पसीने-पसीने होकर पेंशन के कालखंड में मन ही मन हिसाब लगाया कि क्या अब इस उम्र में मुझे दोबारा 'बेबी पाउडर' और 'नैपी' के चक्कर काटने पड़ेंगे? मैंने डरते-डरते पूछा...."ये क्या माजरा है? क्या ईश्वर ने इस उम्र में दोबारा पिता बनने का 'समन' जारी कर दिया है?"

श्रीमती जी ने झल्लाकर सेल्फी स्टिक मेरी नाक के पास ला दी और बोलीं...."क्या आपभी ना.. अरे, दिमाग तो ठीक है आपका? ये कोई गुड न्यूज़ नहीं है, ये तो 'रील' का कमाल है! आज मुझे 'गर्भवती महिला' का अभिनय करना है ताकि मेरे **फॉलोअर्स बढ़ सकें**। ये तो बस पेट के अंदर तकिया ठूँसा हुआ है!"

साहब पूछो मत, मेरी जान में जान आई! पर इस रील-पुराण का अंत यहीं नहीं होता। अब तो हालत यह है कि रेस्तरां में खाना पेट के लिए नहीं, कैमरे के लिए आता है। धुआँ निकलता पनीर टिक्का तब तक अछूता रहता है, जब तक उसे चार 'एंगल' से शूट न कर लिया जाए। चाहे धुआँ निकलना बंद हो जाए, खाना बर्फ की तरह ठंडा हो जाए, पर रील का 'ट्रांजेक्शन' सही होना चाहिए। मैंने एक दिन पूछ ही लिया....'देवी, ठंडा खाकर पेट भरोगी या रील के 'व्यूज' से?' जवाब मिला....'स्वाद तो क्षणिक है झा जी, रील तो अमर है!'".

मंदिर जाइए तो वहाँ भी 'भक्ति' कम और 'बैकग्राउंड म्यूजिक' की चिंता ज्यादा होती है। लोग भगवान के सामने हाथ जोड़कर भी यह चेक करते हैं कि 'स्लो-मोशन' सही आ रहा है या नहीं।

कल तो हद ही हो गई! मैंने देखा एक लड़का नाले के किनारे उदास बैठा था। मुझे लगा बेचारा बेरोजगारी का मारा है, सांत्वना देने पास पहुँचा तो उसने झिड़क दिया...."हटिए अंकल! फ्रेम खराब हो गया, मैं 'सैड रील' बना रहा हूँ!"

मैंने भी कह दिया....'बेटा, नाले में गिर जाओ तो 'कॉमेडी रील' भी बन जाएगी और फ्रेम भी एकदम नेचुरल आएगा!'"

सच्चाई यही है कि आजकल लोग रील में इतने मगन हैं कि उन्हें असली और नकली भावनाओं का फर्क ही समझ नहीं आ रहा। रील की ये बीमारी वाकई दिल पर भारी पड़ रही है। घर की चहारदीवारी से लेकर श्मशान तक, हर जगह बस एक ही शोर है...."कैमरा एक्शन!"

दुःख तो तब होता है आजकल सड़क पर कोई गिर जाए, तो लोग उसे उठाने के लिए हाथ नहीं बढ़ाते, बल्कि जेब से फोन निकालकर 'लाइव कवरेज' शुरू कर देते हैं। अब दुर्घटना सहायता का विषय नहीं रही, वह 'कंटेंट' बन गई है। रील बनाने वाला ऐसे कमेंट्री करता है जैसे वह देश का सबसे बड़ा पत्रकार हो, भले ही सामने वाला दर्द से कराह रहा हो। उसे इंसान की जान की फिक्र नहीं, उसे इस बात की चिंता है कि 'लाइटिंग' कम तो नहीं है।

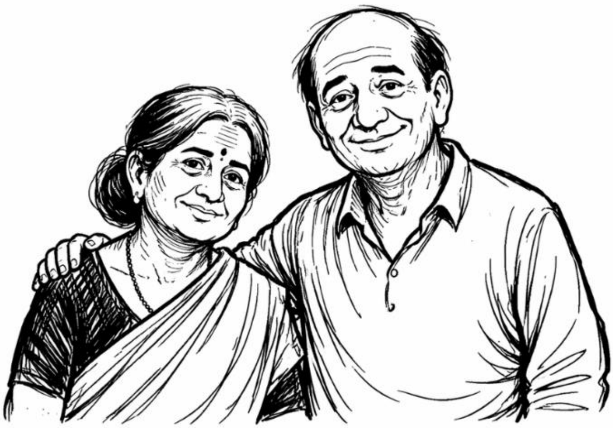

सरकारी लंच—एक 'ब्रह्मांडीय' विश्राम

बापू.... नौकरी करते ही पेट के लिए... वरना नौकरी क्यों......

सरकारी लंच—एक 'ब्रह्मांडीय' विश्राम

साथियों, दुनिया में कई तरह के 'टाइम' होते हैं—प्राइम टाइम, बैड टाइम, और गुड टाइम। लेकिन भारतीय नागरिक के जीवन में सबसे भयानक समय होता है....सरकारी कार्यालय का 'लंच टाइम'। यह एक ऐसा मायावी समय है जो घड़ी की सुइयों से नहीं, बल्कि बाबू के टिफिन की खुशबू से शुरू होता है और उसकी डकार की तीव्रता पर खत्म होता है।

सरकारी दफ्तर में 'काम' और 'लंच' के बीच वही संबंध है जो 'शादी' और 'शांति' के बीच है—दोनों एक साथ नहीं रह सकते!

अभी पिछले ही हफ्ते एक छोटी सी फाइल के चक्कर में दफ्तर पहुँचा। बाबूजी के दर्शन हुए, तो लगा जैसे किसी पुराने मंदिर के कपाट खुल गए हों। जैसे ही मैंने फाइल आगे बढ़ाई, बाबूजी ने घड़ी की तरफ ऐसे देखा जैसे 'नासा' (NASA) का कोई रॉकेट लॉन्च होने वाला हो। बोले...."झा जी, डेढ़ बज गया है... लंच टाइम!"

मैंने कहा...."साहब, घड़ी में तो अभी सवा एक ही हुआ है?" वह बोले...."सरकारी घड़ी भावनाओं पर चलती है, सेल पर नहीं। हमें लंच करने की तैयारी में भी पंद्रह मिनट लगते हैं।"

अब मैंने पूछ लिया कबतक इंतज़ार करूँ ज़वाब मिला लंच टाइम: 1:30 से अनंत काल तक.

इसके बाद जो हुआ, वह किसी 'यज्ञ' से कम नहीं था। चार कुर्सियां एक साथ जुड़ीं, अखबार का 'कालीन' बिछा और टिफिन के डिब्बे ऐसे खुले जैसे कोई खजाना मिल गया हो। बाहर हम जैसे 'फाइल-धारी' ऐसे खड़े रहते हैं जैसे किसी अस्पताल के बाहर तीमारदार—कि कब बाबूजी का आचार खत्म होगा और कब हमारी किस्मत की फाइल पर हस्ताक्षर का 'तिलक' लगेगा।

हैरानी तो तब होती है जब लंच खत्म होने के बाद बाबूजी को 'डकार' लेने के लिए भी अलग से पंद्रह मिनट का 'मेडिटेशन' चाहिए होता है। आप पूछ लें...."साहब, काम हो गया?" तो जवाब मिलता है...."अभी खाना गले तक भरा है, दिमाग तक पहुँचने में वक्त लगेगा। कल आना!"

अबकी बार कहने की हिम्मत नहीं हुई तो आँखों के इशारे से कहना चाहा तो बाबूजी चश्मा नाक पर टिकाया और दार्शनिक अंदाज़ में बोले....'झा जी, इस दफ्तर का एक शाश्वत नियम याद रखिये... जब तक पेट खाली रहता है, तब तक हमारा लंच टाइम चलता है और जैसे ही काम के बोझ से दिमाग खाली होने लगता है, समझ लीजिये कि ऑफिस टाइम खत्म हो गया है!'

मैं हक्का-बक्का उन्हें देखता रह गया। यानी उनके लिए पेट की भूख 'ब्रेक' है और दिमाग की थकान 'छुट्टी'! हम जैसे आम आदमी तो बस बीच में 'वेटिंग लिस्ट' की तरह लटके रहते हैं।"

"ऐ आई" की आफत

बिना हीरो-हीरोइन के AI
की मदद से फिल्म तैयार
यह तो वही कलमुंही.. जिसके साथ चैट कर रहे थे... और मुझे क्या कहा... AI है...

"ऐ आई" की आफत

आजकल जहाँ देखो वहां 'AI' (एआई) का शोर है। लोग कहते हैं दुनिया बदल रही है, पर हमारे लिए तो 'ऐ आई' का मतलब हमेशा से वही रहा है जो आज भी दिल की धड़कनें बढ़ा देता है। हमारे ज़माने में जब कोई युवती मखमली आवाज़ में कहती थी....'हाँ... ऐ आई...'—तो कसम से, उम्र के इस पड़ाव पर भी गिरते हुए बाल रुक जाते हैं और चेहरे पर वो रौनक आ जाती है जो फेयर एंड लवली क्रीम से भी न आए।

अब तो AI कुछ हो न हो कंपनी अपने उत्पाद के विज्ञापन में यह जरुर जोड़ लेता है इसमें AI तकनीक का उपयोग या इन बिल्ट "AI" वगैरा वगैरा. अब एक गीजर कंपनी के विज्ञापन को ही ले लीजिए, कहता है हमारी कम्पनी का गीजर ले लो उसमे इन बिल्ट AI है विश्वास करो उसमें AI है.

अभी कुछ दिन पहले सुना कि एक फिल्म बनी है जिसमें न हीरो है, न हीरोइन—सब कुछ AI ने कर दिया। अब हमारे बालों में भले सफेदी आ गई हो, पर नीयत अभी भी.... 'हाई-डेफिनिशन' ही है। तो हमने भी सोचा कि चलो, इस नए ज़माने की तकनीक का मज़ा लिया जाए। हम सोशल मीडिया की गलियों में निकल पड़े। किस्मत देखिए, उधर से एक युवती का मैसेज आया—दिल फिर से उछलने लगा।

श्रीमती जी को शक न हो, इसलिए हमने अपनी 'विद्वत्ता' का कार्ड खेला। एक दिन न्यूज़ देखते हुए जब मौसम बताने वाली सुंदर सी मॉडल आई, तो श्रीमती जी बोलीं—'इसे रोज़ देखो, एक ही स्टाइल में बोलती है।' हमने बड़े गर्व से कहा—'अरे भाग्यवान, ये हाड़-मांस की औरत नहीं है, ये तो AI जनरेटेड है। यह वास्तविक नहीं है।' हमें लगा कि हमने अपनी चैटिंग के लिए एक मज़बूत 'फायरवॉल' तैयार कर लिया है।

पर असली मुसीबत तब आई जब हम चैटिंग में मशगूल थे और अचानक श्रीमती जी 'साक्षात् चंडी' का रूप धरकर सामने आ धमकीं। अक्सर ऐसा होता है जैसे ऑनलाइन चैटिंग वाली युवती के परफ्यूम की खुशबू भी पत्नियों को आ जाती है। पारा सातवें आसमान पर था! हमने तुरंत पैंतरा बदला और कहा—'अरे पगली, डर मत... ये तो वही AI है जिसके बारे में मैंने बताया था।' उस वक्त तो जान में जान आई।

पर किस्सा यहीं खत्म नहीं हुआ दोस्तों! चार दिन बाद वही युवती हमारे घर के दरवाजे पर आ खड़ी हुई। पत्नी की तेज़ नज़रों ने उसे पहचान ही लिया ....'यह तो वही कलमुंही है जिसके साथ तुम रात-भर चैट कर रहे थे! और मुझे क्या घुट्टी पिलाई थी... कि ये AI है?'

भाइयों तकनीक कितनी भी तरक्की कर ले, पर बीवी के 'नैचुरल शक' का कोई एंटी-वायरस आज तक नहीं बना। जब वह कलमुंही साक्षात् घर के दरवाजे पर आ खड़ी हुई, तो मेरा 'आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस' वाला सारा किला ढह गया। श्रीमती जी की उंगली मेरी तरफ उठी हुई थी और गर्जना ऐसी कि लगा जैसे मेरा 'सिस्टम' अभी क्रैश हो जाएगा. अब मैं कैसे समझाऊं कि यह कोई तकनीकी त्रुटि नहीं, बल्कि मेरी 'एक्चुअल आफत' है जो घर तक चली आई है!

किस्त-किस्त में मरता मिडिल क्लास

पॉपकॉर्न और हुलिया देखकर लग रहा है... इस महीने की EMI पूरी.....

किस्त-किस्त में मरता मिडिल क्लास

मेरे साथ किस्तों के बोझ से दबे मेरे साथियों!

यह सिर्फ एक संस्मरण नहीं, बल्कि हम जैसे करोड़ों लोगों की 'बैलेंस शीट' का कच्चा चिट्ठा है। हम वो लोग हैं जिनके सपने बुर्ज खलीफा जितने ऊँचे हैं, पर जेब की सिलाई ऐसी अदृश्य रूप से फटी है कि सिक्का डालो तो सीधे टखने के पास जाकर रुकता है।

अमीर आदमी अपने 10 बेडरूम के बंगले का नाम 'शांति कुटीर' रखता है ताकि इनकम टैक्स वालों को लगे कि बेचारा बड़ी मुश्किल में है। और हम? हम नीले रंग से पुते अपने 10x10 के कमरे का नाम 'व्हाइट हाउस' रखते हैं, क्योंकि दिल तो हमारा भी ट्रम्प जैसा बड़ा है!

मुझे याद है, आठवीं पास करने पर जब पिताजी ने वो 'सेकंड हैंड' साइकिल दिलाई थी, तो ख़ुशी का आलम यह था कि उस पर लगी रंगीन पन्नियों की चमक के आगे मोहल्ले की सारी गाड़ियाँ फीकी लगती थीं। उस दौर में लोन लेना पाप समझा जाता था। बैंक मैनेजर की आँखें एक्सरे मशीन जैसी होती थीं—वो आपके जूतों की घिसी हुई एड़ी देखकर बता देता था कि आपको लोन मिलेगा या लंच के बाद आना पड़ेगा।

आज तो ज़माना ही बदल गया है। आज बैंक वाले नहीं, बल्कि 'झा जी' की भूखी आँखों का इंतज़ार प्राइवेट कंपनियाँ कर रही हैं। आप बस एक बार किसी कार के शोरूम के सामने गलती से छींक भर दीजिए, सेल्समैन लपक कर आ जाएगा। आप कहेंगे—'भाई अभी बजट नहीं है', तो वो ब्रह्मास्त्र छोड़ेगा....'अरे झा जी, अपने लिए मत लीजिए, कम से कम मुन्ने की मुस्कान के लिए तो ले लीजिए!' अब मुन्ने की मुस्कान के आगे झा जी का 'परोपकारी कलेजा' पिघल

जाता है। हम तो ठहरे भावुक जीव, चार बार किसी ने आग्रह किया नहीं कि हमने अंगूठा टेक दिया।

असली मज़ा तब आता है जब महीने की पहली तारीख को पेंशन का कैलकुलेटर और बैंक की EMI आपस में कुश्ती लड़ते हैं। पेंशन वाली गणना तो फिर भी ठीक है, पर जैसे ही EMI की बारी आती है, कैलकुलेटर 'एरर' (Error) दिखाने लगता है—जैसे वो भी कह रहा हो, 'झा जी, ये आपसे न हो पाएगा!'

उस समय की बेचैनी देखिए—जब तक मोबाइल की घंटी 'टिंग-टिंग' करके ये न बता दे कि 'अमुक राशी आपके खाते से काट ली गई है', तब तक चैन नहीं पड़ता। और जैसे ही EMI कटने का मैसेज आता है, श्रीमती जी का 'सेंसर' भी एक्टिव हो जाता है। घर के माहौल में एक अजीब सी शांति छा जाती है।

हम हाथ में पॉपकॉर्न का टब लिए और एक ढीली-ढाली बनियान में घर घुसते हैं, तो उनकी वह 'निर्वाण' वाली मुस्कान देखकर श्रीमती जी समझ जाती हैं। अखबार पढ़ते हुए उनकी तिरछी नज़र और वह मुस्कान कह रही होती है....**'पॉपकॉर्न की बाल्टी और तुम्हारा ये हुलिया बता रहा है... कि इस महीने की EMI पूरी हुई और आबरू बच गई!'** यही तो मिडिल क्लास की असली जीत है दोस्तों! अगले महीने फिर वही युद्ध.....!

स्वच्छता अभियान: फोटो खिंचने तक की सफाई

स्वच्छता अभियान: फोटो खिंचने तक की सफाई

साथियों, अक्सर सुना है कि हर सफल पुरुष के पीछे एक महिला का हाथ होता है। पर मेरा अनुभव थोड़ा व्यापक है—सफलता ही क्यों, पुरुष के 'ब्रेक' पर ब्रेक लगाने के पीछे भी उन्हीं का हाथ होता है। जैसे ही मैं ऑफिस से छुट्टी लेकर चैन की सांस लेने की सोचता हूँ, पीछे से आवाज़ आती है—'शक्कर और किराने का सामान खत्म है, ज़रा बाज़ार हो आओ!' या फिर देखो वर्मा जी के मनाली ट्रिप का ताना और एक तुम हो कि छुट्टी भी नहीं लेते.

खैर, अभी दो दिन पहले की बात है। ऊपर से आदेश हुआ—**स्वच्छता अभियान**. मैं ठहरा ठेठ आलसी जीव, गहरी नींद में 'स्वच्छ' सपने देख रहा था, कि तभी श्रीमती जी ने ठंडे पानी के 'प्रहार' से मुझे जगा दिया। सख्त हिदायत मिली—'मोदी जी ने अभियान चलाया है, तो भाग लेना ही पड़ेगा!' **प्रशासन ऊपर के आदेश से बंधा था और मैं श्रीमती जी के.**

आँखें मलता हुआ जब मैं आयोजन स्थल पर पहुँचा, तो नज़ारा अद्भुत था. हमारे विभाग के वो आला अधिकारी, जो दफ्तर में 'ईद का चाँद' होते हैं, आज सब के सब ज़मीन पर थे। सबके हाथ में फूलदार रंगीन झाड़ू!

मैंने पास खड़े अपने मोहल्ले के सफाईकर्मी से पूछा—'भाई, तू इसमें शामिल नहीं?' उसने बेचारगी से कहा—'झा भाई, आज सिर्फ नामी-गिरामी ही अलाउड हैं, मैं ठहरा अदना सा...' मैंने फिर पूछा—'पर इनके हाथ में ये रंगीन झाड़ू और तेरे हाथ में ये?' उसने अपने अनुभव से सिर खुजाते हुए कहा—**'झा भाई, झाड़ू दो प्रकार की होती है—एक वो जो सिर्फ फोटो खिंचवाने के काम आती है और दूसरी बेचारी जो सच में कचरा ढोती है!'**

मैं सोंच रहा था मुहूर्त का इंतज़ार हो रहा है कि एक अधिकारी की नज़र मुझ पर पड़ी। बोले—'अरे ओ आलसी झा भाई, पकड़ो झाड़ू और हो जाओ शुरू!'

मैंने जैसे ही कमान संभाली, वो चिल्लाए—'अरे घनचक्कर! यह जगह तो पहले से साफ़ है, पहले यहाँ थोड़ा कचरा तो फैलाने दे!'

इतने में एक सरकारी मुलाज़िम हाँफता हुआ आया—'रुको रुको! सफाई का काम केवल बड़े अधिकारी करेंगे और फोटो अपलोड करेंगे।' मुझे लगा जान छूटी. पर तभी एक कड़क आवाज़ आई—'जाता कहाँ है? ये ड्रम वाला कचरा ज़मीन पर थोडा सा डाल!' कैमरामैन को हिदायत दी गई कि एंगल ऐसा लेना कि झा भाई कचरा डालते न दिखें।

मैंने अफसरों के आदेश को सर-आँखों पर लिया और पूरा कचरा उड़ेल दिया। जैसे ही 'क्लिक' की आवाज़ आई, अफसर साहब मुस्कुराए और बोले—**'झा भाई, ये अभियान तो फोटो खींचने तक ही था। अब बटन दब गया है, तो बाकी की असली सफाई... वो अब तुझे ही करनी है!'**

सब्सिडी, मशीन और कान का कच्चापन

सब्सिडी, मशीन और कान का कच्चापन

साथियों, कई बार मैं कुदरत की इंजीनियरिंग को देखकर दंग रह जाता हूँ। शरीर का हर पुर्जा अपना काम बखूबी करता है, लेकिन उम्र के इस मोड़ पर पहुँचते-पहुँचते इन पुर्जों में भी थोड़ा जंग लगने लगता है। खासकर जब कड़ाके की ठंड हो और धुंध की मार, तो दिमाग और इंद्रियाँ भी थोड़ा 'आउट ऑफ फोकस' हो जाती हैं।

सरकार की आदत है कि वो हर मौसम में वादों की नई 'सब्सिडी' लेकर आती है। अभी हाल ही में टीवी पर खबर चल रही थी कि **'पुरानी गाड़ी बदलने पर सरकार सब्सिडी देगी'**। अब मेरी आँखों का 'रीडिंग ग्लास' थोड़ा धुंधला था और कान भी बिना मशीन के विदाई ले चुके थे। मैंने पढ़ लिया—**'पुरानी लाड़ी बदलने पर सरकार सब्सिडी देगी'**!

साहब, कसम से, यकीन मानिए! उस वक्त मुझे लगा कि सरकार ने आख़िरकार हम जैसे पतियों की 'हार्ट बर्न' (Heart burn) समस्या का कोई वैज्ञानिक समाधान खोज निकाला है। मैं खुशी के मारे सोफे पर ऐसा उछला कि लगा अभी **'पद्म भूषण'** लेने के लिए मंच पर पहुँच जाऊँगा।

तभी पीछे से साक्षात् 'हाई-वोल्टेज' बिजली कड़की। श्रीमती जी खड़ी थीं। उन्होंने बिना किसी दया-भाव के मेरे कान में सुनने वाली मशीन ठूँसते हुए कहा....**'मशीन पहनो... सुनते-करते हो नहीं! नेताजी कह रहे हैं कि पुरानी गाड़ी बदलने पर सब्सिडी मिलेगी, लाड़ी नहीं!'**

मेरा सारा उत्साह उस सब्सिडी की तरह उड़ गया जो कभी खाते में आती ही नहीं। सच कहूँ तो, उम्र के इस पड़ाव पर सब्सिडी चाहे गाड़ी पर मिले या लाड़ी पर, हम जैसे पतियों का हाल तो वही रहता है—**गाड़ी बदल भी लो, तो उसे 'ड्राइव' करने वाली तो वही पुरानी 'होम मिनिस्टर' रहेगी!"**

टारगेट — दफ्तर की फाइल से घर के जाले तक

पहले बैंक में थे.... टारगेट दे दिया... घर की सफाई, खाना... नहीं तो दिनभर टीवी पर चिपके रहेंगे...

टारगेट—दफ्तर की फाइल से घर के जाले तक

आदरणीय साथियों और सेवानिवृत्ति के बाद 'होम-ड्यूटी' पर तैनात मेरे जांबाज योद्धाओं!

अक्सर लोग मुझसे पूछते हैं कि झा जी, बैंक की नौकरी के बाद चेहरे पर ये जो 'निर्वाण' वाली चमक है, उसका राज क्या है? मैं उनसे कहता हूँ—साहब, ये चमक नहीं है, ये तो उस 'टारगेट' वायरस का असर है जो लिपिक की नौकरी के पहले दिन चिपका था और आज तक पीछा नहीं छोड़ रहा।

बचपन में जब हम ब्लैक एंड व्हाइट फ़िल्में देखते थे, तो सपने सँजोते थे कि अपनी **'होने वाली'** के साथ किसी सजीले पार्क में पेड़ों के इर्द-गिर्द चक्कर लगाते हुए गाने गाएंगे। हमारे ज़माने में 'हनीमून' शब्द का अभी ठीक से आविष्कार भी नहीं हुआ था, और अगर हुआ भी था तो वो हमारे जैसे छोटे शहरों के लिपिकों की पहुँच से बाहर की चीज़ थी। शादी हुई, बाल-बच्चे हुए, पर जो सपना था वो मुझे बार बार कचौट रहा था. खैर अब ये दौर आया कि हम सरकारी सेवा से निवृत्त हुए. सोंचा चलो जवानी में न सही, अब पार्क जाएंगे। पर हाय री किस्मत! ये जो **Target** नाम का वायरस था, इसने पीछा ही नहीं छोड़ा। जवानी दफ्तर की फाइलों में 'क्लोजिंग' और 'ऑडिट' के चक्कर काटते-काटते कब रिटायर हो गई, पता ही नहीं चला।

मैंने सोचा था कि सेवानिवृत्ति के बाद तो कम से कम चैन मिलेगा। सोचा था अब तो जवानी के वो अधूरे फ़िल्मी सपने पूरे करूँगा। पर मुझे क्या पता था कि जो 'टारगेट' पहले बड़े साहबों और उच्चाधिकारियों के ईमेल से आता था, वो अब म्यूटेंट (Mutant) होकर श्रीमती जी के आदेशों में बदल चुका है।

अब मेरा सीढ़ी पर चढ़कर पंखे के जाले साफ़ करना और श्रीमती जी का पड़ोसन को मुस्कराते हुए मेरी 'उपलब्धि' बताना कि **'पहले बैंक में थे... अब**

मैंने भी टारगेट देने कि परंपरा को जारी रखने का विचार ... जैसे घर की सफाई, खाना... नहीं तो दिन भर टीवी पर चिपके रहेंगे!'

जनाब, दफ्तर में तो फिर भी 'ओवरटाइम' मिलता था, यहाँ तो बस 'ओवर-ड्यूटी' है। पहले मैनेजर का खौफ था, अब 'होम-मिनिस्टर' का कड़ा अनुशासन है। अब हाथ में फूलों का गुलदस्ता और होठों पर फ़िल्मी गाना नहीं है, बल्कि हाथ में झाड़ू है और सिर पर पंखा चमकाने का सख्त टारगेट है। सच कहूँ तो, बैंक से तो रिटायरमेंट मिल गया, पर बीवी के दिए इस घरेलू 'टारगेट' से मुक्ति अब 'मशीन' (सुनने वाली) खराब होने पर भी नहीं मिलने वाली!

एक 'स्पेस' का चक्कर और डॉक्टर साहब का सन्नाटा

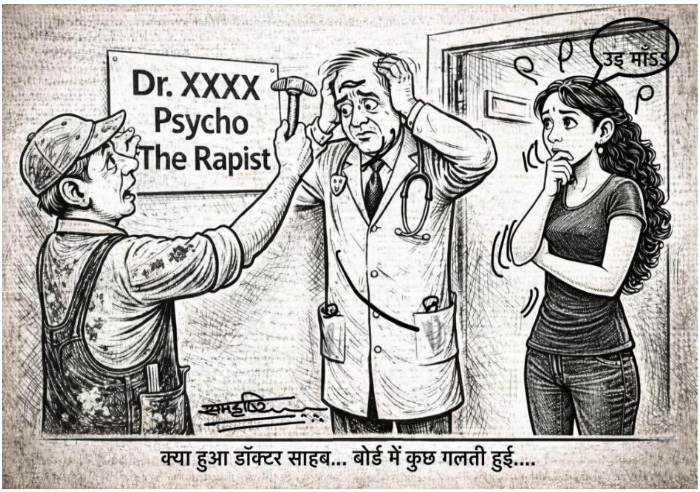

एक 'स्पेस' का चक्कर और डॉक्टर साहब का सन्नाटा

अक्सर कहा जाता है कि अधूरी जानकारी खतरनाक होती है, पर मेरा मानना है कि 'अधूरी स्पेलिंग' और 'गलत स्पेस' उससे भी ज्यादा जानलेवा हो सकते हैं।

मैं ठहरा कच्ची बुद्धि का आदमी, और शौक लगा ड्राइंग और कार्टून बनाने का। मेरे एक परिचित डॉक्टर साहब थे, जो पेशे से **मनोचिकित्सक (Psychiatrist)** थे। उन्होंने मेरी कलाकारी देखी और बड़े उत्साह में आकर मुझे अपने क्लिनिक का बोर्ड बनाने का ऑफर दे दिया। मैंने भी सोचा कि चलो, अपनी कला का प्रदर्शन किसी नेक काम में करते हैं।

जोश-जोश में मैंने बोर्ड तैयार किया और बिना किसी 'प्रूफ' या जाँच के सीधे क्लिनिक के दरवाजे के बाहर ठोक दिया। उस दिन के बाद से आज तक मेरी बोलती बंद है और डॉक्टर साहब के क्लिनिक का सन्नाटा चीख-चीख कर मेरी 'काबिलियत' की दास्ताँ सुनाता है।

हुआ यूँ कि मुझे लिखना था **'Psychotherapist'** (साइकोथेरेपिस्ट), जो कि एक सम्मानजनक चिकित्सा विधा है। पर मेरी कलम और दिमाग के बीच 'स्पेस' का ऐसा तालमेल बिगड़ा कि बोर्ड पर लिख गया....**'Psycho The Rapist'**।

मुझे लगा शायद डॉक्टर साहब खुश होंगे शाबाशी देंगे पर उनके और क्लिनिक में इलाज़ के लिए आई कन्या के चेहरे के बदलते समीकरण पर मैंने मासूमियत से पूछा- **'क्या हुआ डॉक्टर साहब... बोर्ड में कुछ गलती हुई क्या?'**

अधूरी जानकारी खतरनाक होती है, पर 'गलत स्पेस' उससे भी ज्यादा जानलेवा हो सकता है। जोश-जोश में मैंने मनोचिकित्सक मित्र के क्लिनिक का बोर्ड तो ठोक दिया, पर मेरी कलम और दिमाग के बीच 'स्पेस' का ऐसा तालमेल

बिगड़ा कि सम्मानजनक 'Psychotherapist' रातों-रात 'Psycho The Rapist' में बदल गया। उस दिन के बाद से डॉक्टर साहब का सिर पकड़ना और क्लिनिक का सन्नाटा चीख-चीख कर मेरी 'काबिलियत' की दास्ताँ सुनाता है। उस एक 'स्पेस' ने डॉक्टर साहब की आधी प्रैक्टिस और मेरी पूरी साख सीधे अंतरिक्ष (Space) में भेज दी।

साहब, उस एक 'स्पेस' ने डॉक्टर साहब की आधी प्रैक्टिस और मेरी पूरी साख उसी दिन 'स्पेस' में भेज दी। अब तो हाल यह है कि कहीं बोर्ड लगा देखता हूँ तो पहले खुद से पूछता हूँ कि कहीं मैंने यहाँ भी कोई अनर्थ तो नहीं कर दिया!

यही है मेरी **'समदृष्टि'**, जहाँ मैं अपनी ही मूर्खताओं पर मुस्कुराना सीख गया हूँ।"

सीमा पार का संस्कार और स्वदेशी पिचकारी

सीमा पार का संस्कार और स्वदेशी पिचकारी

साथियों, हम ठहरे ठेठ आलसी। जहाँ जगह मिली, वहीं अपनी **'उपस्थिति'** दर्ज करा दी। और पान की पिचकारी? साहब, पान खाने में वो मज़ा कहाँ जो उसकी पिचकारी छोड़ने में आता है! यह एक ऐसी कला है जो हमारे डीएनए में बसी हुई है।

अभी कुछ दिन पहले की बात है, मेरे एक भाई-बंधु विदेश से लौटे। मैं उन्हें लेने एयरपोर्ट गया। अब मन में यह डर था कि भाई साहब सात समंदर पार से आए हैं, कहीं बात-बात पर अंग्रेजी की 'विदेशी भाषा' न झाड़ने लगें और मैं चुप हो जाऊँ।

टैक्सी में बैठते ही मैंने हिचकिचाते हुए पूछा—'भाई, वहां परदेस में भी पान-गुटका खाते हो? क्या वहां पिचकारी चलती है?'

उन्होंने मेरी तरफ देखा, मुस्कुराए और बोले—'एक मिनट रुको झा भाई!' और अगले ही पल टैक्सी की खिड़की से बाहर वही चिर-परिचित 'पिचकारी'!

'झा भाई, विदेश में कानून की कड़ाई और कैमरे की नज़र हमें डरा कर रखती है। वहां हम 'सभ्य' नहीं होते, बल्कि 'सावधान' होते हैं। पर जैसे ही अपने देश की हवा लगती है, हमें लगता है कि आहा! अब हम आज़ाद हैं। ये जो सड़क पर लाल निशान है न, ये दरअसल हमारी 'आजादी' का साइन बोर्ड है!'

सच मानिए साथियों, मैं सोच में पड़ गया। हम वो लोग हैं जो सिंगापुर की सड़क पर चॉकलेट का रैपर जेब में रख लेते हैं, पर पालम या उदयपुर पहुँचते ही वही हाथ 'स्वच्छता अभियान' के बैनर के नीचे ही पान की कलाकारी दिखाने लगते हैं।

कसम से, मेरा सारा डर काफूर हो गया। मुझे मेरा जवाब मिल गया था। मैंने समझ लिया कि पासपोर्ट पर भले ही विदेशी मुहर लग जाए, पर ये जो 'पिचकारी' का हुनर है, वह इंसान के साथ साये की तरह चलता है। हम चाहे न्यूयॉर्क में रहें या नैरोबी में, हमारे भीतर का वो 'ठेठ आलसी' अपनी जड़ें कभी नहीं छोड़ता!"

विदेश यात्रा के अंत
में इटली का दौरा
नानी के घर जाऊंगा दूध मलाई खाऊंगा....

रिमोट कंट्रोल और श्रीमती जी की 'गूगली'

रिमोट कंट्रोल और श्रीमती जी की 'गूगली'

साथियों, गृहस्थी के खेल में पति-पत्नी के बीच एक बात तो तय है—हम किसी एक बात पर अड़ नहीं जाते। किसी न किसी बिंदु पर आकर हम 'समझौता' कर ही लेते हैं। बस फर्क इतना है कि समझौता अक्सर मेरे 'समर्पण' से शुरू होता है।

अभी दो दिन पहले की बात है, भारत और न्यूज़ीलैंड का मैच था। प्रसारण का समय शाम 7 से रात 12 बजे तक का था। अब समस्या ये थी कि इसी दौरान श्रीमती जी के पसंदीदा सीरियल्स का भी समय होता है। मैंने मन ही मन सोचा—चलो, आज इसी बहाने श्रीमती जी को थोड़ा छेड़ा जाए। मैंने बड़े उत्साह के साथ रिमोट कंट्रोलर को अपने 'कमांड' में ले लिया।

जैसे ही सीरियल का समय शुरू हुआ, मैं भीतर ही भीतर लड्डू फोड़ रहा था। मुझे लगा अब श्रीमती जी अनुनय-विनय करेंगी, 'प्लीज़' कहेंगी, और मैं मंद-मंद मुस्कुराते हुए अपनी 'सत्ता' का आनंद लूँगा। श्रीमती जी पास के सोफे पर आकर चुपचाप बैठ गईं।

इतने में दरवाजे की घंटी बजी और उनकी सहेली अंदर आई। मैं अपनी 'स्नेहिल भावनाओं' पर काबू न रख पाया, रिमोट श्रीमती जी के हाथ में थमाया और बड़े ही आदर से सहेली का स्वागत करने खड़ा हो गया। आखिर अतिथि देवो भव:!

पर जैसे ही मैं खड़ा हुआ, पत्नी ने मुस्कुराते हुए अपनी सहेली से कहा....**'बैठ जाओ, ये मुझे आसानी से रिमोट नहीं देते, इसलिए मैंने तुम्हें बुलाया ताकि शिष्टाचार के नाते इन्हें रिमोट छोड़ना ही पड़े!'**

साहब, कसम से, उस वक्त मेरी हालत किसी 'पीटे हुए शेर' जैसी हो गई। मुझे समझ आ गया कि **मैं पिच पर बैटिंग की तैयारी कर रहा था और श्रीमती जी ने बाहर से ही 'गूगली' डाल दी थी!**

रूठने का 'पेटेंट' और माघ का जबरन स्नान

रूठने का 'पेटेंट' और माघ का जबरन स्नान

साथियों, बचपन में फिल्में देखकर एक बड़ा ही रूमानी सपना पाला था। सोचा था शादी होगी, तो फिल्मों की तरह रूठने-मनाने का दौर चलेगा। मैं रूठूँगा, वो मनाएंगी... फिर थोड़ा और प्यार बढ़ेगा। पर साहब, शादी के बाद 'रीयल लाइफ' के परदे पर जो फिल्म चली, उसने जन्नत की हकीकत से रूबरू करवा दिया। पता चला कि घर में 'रूठने' का सर्वाधिकार (Copyright) तो केवल और केवल पत्नी के पास सुरक्षित है।

अभी कुछ दिनों पहले की बात है, टीवी पर देखा कि एक संत ने अपनी कोई शर्त पूरी न होने तक स्नान न करने की कसम खा ली है। बस, मेरी 'कच्ची बुद्धि' को एक आईडिया आ गया। मैंने भी टीवी के सामने ही उन संत को साष्टांग दंडवत किया और एक कोने में जाकर 'सत्याग्रह' पर बैठ गया। मन में ठान लिया कि जब तक मेरी मांग पूरी नहीं होगी (अब मांग क्या थी, यह पति-पत्नी का आंतरिक मामला है, इसे यहाँ क्या उजागर करने के लिए मजबूर न करें प्लीज?), मैं भी स्नान नहीं करूँगा।

मैं मन ही मन मुस्कुरा रहा था कि जाएगी कहाँ, आखिर हार मानकर मांग पूरी करनी ही पड़ेगी। श्रीमती जी ने भी थोड़ा समय लिया, जैसे मेरी जिद की 'एक्सपायरी डेट' चेक कर रही हों। थोड़ी ही देर बाद, वो बाल्टी भरकर पानी ले आईं। पानी क्या था, साक्षात फ्रीज की बर्फ घुली हुई थी!

इससे पहले कि मैं कुछ समझ पाता, उन्होंने जनवरी की इस कड़ाके की ठंड में मुझ पर वो पानी ऐसे उड़ेला, जैसे मेरा पावन 'माघ स्नान' घर के कोने में ही संपन्न करवा लिया।

मैं थर-थर कांपते हुए कराहने लगा, बस इतना ही कह पाया....**'अरे भाग्यवान! कभी-कभी तो मुझे भी रूठने का मौका दे दिया कर!'**

आम आदमी, हीलिंग और श्रीमती जी का 'घूरना'

आम आदमी, हीलिंग और श्रीमती जी का 'घूरना'

साथियों, आज के ज़माने में हर कोई देख लो 'हीलिंग' की बातें कर रहा है। पर सच तो ये है कि हम जैसे आम आदमी को इस 'हीलिंग-वीलिंग' से कोई खास मतलब नहीं है। हमें क्या पता कि कौन सा चक्र कहाँ घूम रहा है? हमारे लिए तो सबसे बड़ा चक्र **'गृहस्थी का चक्र'** है, जिसे घुमाने में ही तेल निकल जाता है।

लेकिन, हीलिंग की एक तकनीक मुझे बड़े अच्छे से समझ आई है—**'एनर्जी ट्रांसफ़र'**। श्रीमती जी को इसमें महारत हासिल है। वो जब बालकनी से मुझे घूरती हैं, तो उनकी आँखों से जो 'क्रोध और शक की ऊर्जा' प्रवाहित होती है, वो सीधे मेरे बीपी (BP) को हील करने के बजाय हाई कर देती है।

मोहल्ले की कोई कन्या यदि मुझे देखकर मुस्कुराती है। अब बेचारा आम आदमी होने के नाते, मेरा मन तो प्रफुल्लित होगा ही। पर ऊपर देखिए! श्रीमती जी की वो 'स्कैनिंग' वाली नज़रें! आम आदमी को हीलिंग की ज़रूरत तब पड़ती है जब वो बीमार हो, पर यहाँ तो श्रीमती जी की एक 'नज़र' ही मुझे बीमार करने के लिए काफी है।

कन्या उंगली दिखाकर कुछ पूछ रही है, पर मेरी नज़रें तो ऊपर **'खतरे के निशान'** पर टिकी हैं। आम आदमी के लिए 'हीलिंग' का बस एक ही मतलब है—**श्रीमती जी के सामने 'सॉरी' बोल दो, सारी नेगेटिव एनर्जी अपने आप साफ़ हो जाएगी!**

ट्रंप साहब की हसरत और मेरा 'ग्रीनलैंड'

ट्रंप साहब की हसरत और मेरा 'ग्रीनलैंड'

आजकल अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप साहब के चर्चे हर जगह हैं। उनके बारे में एक बात बड़ी मशहूर है कि जहाँ उनकी नज़र पड़ जाए, उसे पाने के लिए वो उतावले हो जाते हैं—चाहे वो 'नोबेल शांति पुरस्कार' हो या फिर पूरा का पूरा 'ग्रीनलैंड'। मैं भी ठहरा अंतरराष्ट्रीय मामलों का शौकीन, तो उनके समाचार बड़े चाव से देखता हूँ।

वैसे मेरी ये रुचि पुरानी है, क्लिंटन साहब के ज़माने से.. श्रीमती जी भी जानती है। यही कारण है कि जब से मैं इन हाई-प्रोफाइल मामलों में दिलचस्पी लेने लगा हूँ, तब से श्रीमती जी मुझ पर कुछ ज़्यादा ही 'चौकन्ना' रहने लगी हैं।

एक दिन मैं अपनी बालकनी में खड़ा होकर 'गहरे सोच-विचार' में डूबा हुआ था। तभी पीछे से साक्षात् 'होम-मिनिस्टर' (श्रीमती जी) का आगमन हुआ। उनकी पारखी नज़र सीधे सामने वाली बालकनी पर जा टिकी, जहाँ मोहल्ले की एक कन्या बड़े मजे से साइकिल पर कसरत कर रही थी.

श्रीमती जी ने मेरी ओर एक तीखी 'समदृष्टि' डाली और कड़क कर बोलीं....**'अच्छा! तो ये है आपका ग्रीनलैंड, जिस पर आप नज़र गड़ाए बैठे हैं!'**

साहब, कसम से, उस वक्त मुझे समझ आया कि ट्रंप साहब तो ग्रीनलैंड खरीद सकते हैं, पर मुझ जैसे 'आम आदमी' के लिए तो पड़ोस की बालकनी भी एक 'प्रतिबंधित क्षेत्र' है। मेरी हालत उस वक्त ऐसी थी कि न मैं 'नोबेल' मांग सकता था और न ही 'ग्रीनलैंड' पर कोई दावा कर सकता था। बस चुपचाप सिर झुकाकर कमरे के अंदर आने में ही अपनी भलाई समझी!"

घर का 'लोकतंत्र' और मेरा वेतन रजिस्टर

कितना अच्छा है... घर में कोई RTI नहीं.. जो पैसे दिए... तनख्वाह मान ली...

घर का 'लोकतंत्र' और मेरा वेतन रजिस्टर

"मित्रों, गणतंत्र दिवस के करीब आते ही मुझे अक्सर वो खौफनाक मंजर याद आता है, जब मेरे घर का शांतिपूर्ण 'लोकतंत्र' खतरे में आ गया था। बात उन दिनों की है जब मैं अपने बालों की सफेदी के साथ-साथ अपने वेतन की असली राशि भी बड़ी कुशलता से छुपाया करता था।

सुबह-सुबह लुंगी और बनियान पहने मैं चाय का इंतज़ार कर रहा था। मुझे लगा आज चाय आने में कुछ ज़्यादा ही देर हो रही है। पर मुझे क्या पता था कि आज प्याले में चाय नहीं, बल्कि मेरे वैवाहिक जीवन का सबसे बड़ा तूफ़ान आने वाला है। श्रीमती जी आईं और मीठी पर कड़क आवाज़ में पूछा....**'तुम्हारी तनख्वाह कितनी है?'**

यह हमारी संस्कृति है कि पुरुष की आय और स्त्री की आयु नहीं पूछी जाती. इससे पहले कि मैं अपनी भारतीय संस्कृति का हवाला देता, उन्होंने मेरा वो कोरा वेतन रजिस्टर मेरी गोद में रख दिया जो मैंने शादी के बाद कभी अपडेट ही नहीं किया था। हिदायत मिली—**'इसे आज ही भरकर लाना!'**

साहब, अब तक तो यह हाल था कि मैं जो भी राशि उनके हाथ में देता, वो उसे ही मेरी कुल आय मानकर माथे से लगा लेतीं। पर उस दिन रसोई घर के कोने में पड़े एक समाचार पत्र ने सारा खेल बिगाड़ दिया। शीर्षक था....**'सूचना प्राप्ति का अधिकार' (RTI)**। अमूमन समाचारों से दूर रहने वाली श्रीमती जी ने न जाने कैसे उस 'लोकतंत्र के चौथे स्तंभ' को पढ़ लिया था।

मैंने सरकारी प्रक्रियाओं की तरह मामले को 'ठंडे बस्ते' में डालने की बहुत कोशिश की, पर नाकाम रहा। टीवी चालू किया तो वहाँ भी RTI के लाभ गिनाए जा रहे थे। मुझे पक्का यकीन हो गया कि यह RTI मेरे घर की नींव हिलाकर ही मानेगा।

सरकार तो 'राष्ट्रीय सुरक्षा' का बहाना बनाकर सूचना दबा भी ले, पर मैं कौन सी 'विदेशी ताकतों' का नाम लेता? अंततः मुझे अपने वेतन की 'सत्यापित कॉपी' (Certified Copy) श्रीमती जी के चरणों में अर्पित करनी ही पड़ी। उसी दिन समझ आया कि घर में शांति बनाए रखने के लिए सूचना का अधिकार नहीं, बल्कि 'चुप्पी का अधिकार' ही सबसे बड़ा वरदान है!"

ओह.. डार्लिंग.... दोनों उपर रहेंगे... तो खाना.....

बजट और आम आदमी

बजट और आम आदमी

बजट वह सर्कस है जिसमें शेर (जनता) को पिंजरे में बंद करके यह समझाया जाता है कि बाहर धूप बहुत तेज है, यहीं भूखे रहो... सुरक्षित रहोगे!

हमारे यहाँ बजट किसी अर्थशास्त्री की रिपोर्ट नहीं, बल्कि एक **'शुद्ध देसी स्वाँग'** है। इसकी पवित्र शुरुआत होती है **'हलवा समारोह'** से। सरकार मानती है कि अगर जनता को कड़वी हकीकत निगलवानी है, तो पहले अधिकारियों के मुंह मीठे करवा देना ज़रूरी है। हलवा मंत्रालय की कड़ाही में पकता है, फोटो अखबारों में छपती है, और आम आदमी घर बैठे टीवी स्क्रीन चाटकर ही तृप्त होने का अभिनय करता है।

अगर जनता को कड़वा सच मीठे हलवे के साथ परोसा जाए, तो वह आसानी से गले उतर जाता है। हलवा वहां पकता है, फोटो यहाँ खिंचती है और खुशबू से ही आम आदमी पेट भर लेता है।

यह हलवा खाना दरअसल एक 'प्रशासनिक अनुष्ठान' है, जिसमें अधिकारी खुद को उस दौरान अपने आपको दुनिया से दूर कर लेता है ताकि बाहर की महंगाई की चीखें कड़ाहे की खट-खट में सुनाई न दें।

जैसे ही कड़ाहे में चम्मच घूमता है, मिडिल क्लास आदमी अपनी फटी जेब को 'सेफ्टी पिन' से सहेजने लगता है। वह जानता है कि हलवे में जितनी भी शक्कर, केसर या बादाम पड़ेंगे, उसका बिल उसकी 'दाल-रोटी' पर ही फटना है। तामझाम के साथ बजट पेश होता है. बजट पेश होने के दिन वित्त मंत्री महोदय हाथ में टैबलेट लेकर ऐसे निकलते हैं जैसे उसमें 'अलादीन का चिराग' बंद हो। भाषण शुरू होते ही आँकड़ों की ऐसी बाजीगरी चलती है कि गरीब आदमी को लगने लगता है कि बस... अब कल से उसकी साइकिल भी पेट्रोल की जगह 'जीडीपी' से दौड़ेगी!

जब संसद में तालियाँ बजती हैं, तो हम मान लेते हैं कि जनता की जेब में एक और छेद की तैयारी हो गई है। टैक्स में 'छूट' का ऐलान ऐसे किया जाता है जैसे किसी प्यासे को रेगिस्तान में 'आँसुओं की एक बूंद' दान की गई हो। लेकिन हम फिर भी खुश हैं! क्यों? क्योंकि भाषण के अंत में वो जादुई शब्द **'शायद'** परोसा जाता है...."**अगला साल शायद अच्छा आए।"**

यह 'शायद' दरअसल वो **'राजनीतिक अफीम'** है जिसे चाटकर हम महंगाई के थपेड़ों में भी चैन की नींद सो जाते हैं। हम भारतीय बड़े संतोषी जीव हैं; हमें हलवा न मिले तो कोई बात नहीं, हम 'अगले साल' की चाशनी में डूबी हुई उम्मीद से ही पूरा साल गुज़ार लेते हैं।

दीदी हरी फाइल लेकर
पुलिस थाना
माई बाप... दीदी नहीं मेरी बीवी ..हरी फाइल में मेकअप का सामान लेकर.....

पुलिस का सॉफ्टवेयर और घर की 'नागरिकता'

पुलिस का सॉफ्टवेयर और घर की 'नागरिकता'

साथियों, आज का जमाना तकनीक का है, और ये तकनीक कब 'अपराधियों' को पकड़ते-पकड़ते हम जैसे मासूम पतियों के गले की फांस बन जाए, पता ही नहीं चलता। अभी पिछले दिनों मैं बड़े चाव से समाचार देख रहा था कि उत्तर प्रदेश पुलिस के पास अब एक ऐसा जादुई सॉफ्टवेयर है, जो मोबाइल से चेहरा स्कैन करते ही बता देता है कि सामने वाला भारतीय नागरिक है या कोई घुसपैठिया।

मैं इस समाचार पर मुस्कुरा रहा था, पर मेरी मुस्कुराहट पर 'होम-मिनिस्टर' (श्रीमती जी) की पैनी नज़र थी। अगले दिन सुबह मैं चैन से बैठा था कि अचानक पीछे से श्रीमती जी की 'उई माँ...' वाली आवाज़ आई। बड़े नाटकीय अंदाज़ में बोलीं....**'ओ सुनो! आज मुझे पता चला कि मेरे अलावा तुम्हारे और कितने.....हैं!'**

साहब, कसम से, मेरा सारा 'भारतीय नागरिक' होने का गौरव हवा हो गया। घबराहट में मैंने आव देखा न ताव, सीधे हाथ जोड़कर विनती करने लगा....'अरे भाग्यवान, ऐसा कुछ नहीं है!' मेरी हालत देखकर वो ज़ोर से खिलखिलाकर हँसी और बोलीं....**'डर गए न? मैं तो मज़ाक कर रही थी! पर याद रखना, आज जो पुलिस ने सोचा है, कल वो हकीकत भी बन सकता है!'**

सच तो ये है कि विज्ञान बाद में आविष्कार करता है, हमारी बीवियों की 'छठी इंद्री' तो जन्मजात ही ऐसे सॉफ्टवेयर से लैस होती है जो पति के हर 'काल्पनिक रिश्ते' को बिना इंटरनेट के भी स्कैन कर लेती है!

अटल जी का 'प्रसाद' और श्रीमती जी का ब्रह्मास्त्र

सब पता है... मुफ्त का है.... और वो दूसरा टीवी में आपने किसको दिया.....

क्या करूं इनका.... हे भगवान.... अरे देखो तो सही.... वो तो कोई बैठी हुई है.....

अटल जी का 'प्रसाद' और श्रीमती जी का ब्रह्मास्त्र

साथियों, लखनऊ की बात ही निराली है, और जब बात हमारे पूर्व प्रधानमंत्री श्रद्धेय अटल जी की जन्म जयंती की हो, तो उत्साह का क्या कहना! अनावरण हुआ, सजावट हुई, और फिर शुरू हुआ वह 'महोत्सव' जिसकी चर्चा समाचारों से लेकर रील तक में रही। शासन ने सजावट के लिए बेशुमार गमले लगाए थे, पर जनता ठहरी 'समदृष्टि' वाली—सबने सोचा, प्रशासन का काम गमले लगाना है और हमारा काम उन्हें सहेजकर अपने घर ले जाना. कौन बेचारे मूक पौधों को पानी पिलाएगा देश के नागरिक होने के नाते हमारा भी कोई कर्तव्य है या नहीं!

मैं भी अपनी 'नैतिक जिम्मेदारी' निभाने पहुँच गया। मैंने सोचा, जहाँ भीड़ हो वहाँ झा जी न हों, ऐसा कैसे हो सकता है? पर साहब, मुझे क्या पता था कि मेरा यह 'अश्वमेध यज्ञ' सीसीटीवी और लाइव कैमरों की भेंट चढ़ जाएगा।

घर पहुँचकर मैंने बड़े ही रूमानी लखनवी अंदाज़ में वह गुलदस्ता श्रीमती जी को भेंट किया। उन्होंने बड़े प्यार से गुलदस्ता थामा, चेहरे पर एक रहस्यमयी मुस्कान आई, और फिर उन्होंने अपना 'डिजिटल ब्रह्मास्त्र' चलाया। टीवी की ओर इशारा करके बोलीं....**'वो देखो लाइव... मुफ्त का माल है वो तो ठीक है, पर टीवी में आप ये गुलदस्ता किसे दे रहे हैं?'**

साहब, कसम से, उस वक्त मेरी हालत उस नेता जैसी हो गई जिसका स्टिंग ऑपरेशन ऑन-एयर हो गया हो। सियावर रामचंद्र की जय बोलते हुए मैंने सरेंडर कर दिया। बड़ी मुश्किल से समझौता हुआ कि कल सुबह सैर के बहाने हम जाएंगे और मैं उन्हें वहीं पर 'ताज़ा' फूल भेंट करूँगा."

अगले दिन सुबह-सुबह हम 'प्रेरणा स्थल' पहुँचे। अँधेरा था, और मैं अपनी 'साख' बचाने के लिए झाड़ियों में फूल तलाशने लगा। मुझे लगा कि मैं किसी

दुर्लभ पौधे से फूल तोड़ रहा हूँ, तभी श्रीमती जी की चीख निकली....**'अरे भाग्यवान! देखो तो सही, अँधेरे में आप फूल किसी पौधे से नहीं, बल्कि झाड़ियों में छुपकर बैठी युवती के बालों से निकाल रहे हो!'**

साथियों पीछे महापुरुषों की प्रतिमाएँ साक्षी हैं, श्रीमती जी दाँतों तले उँगली दबाए खड़ी हैं, और मैं 'सफेद बालों' वाली अपनी इज़्ज़त बचाने के लिए हाथ जोड़कर खड़ा हूँ। साहब, उस दिन समझ आया कि **मुफ्त के गुलदस्ते की कीमत घर में कितनी भारी पड़ती है!**

ये आम आदमी है... भुखा भी रह जाए... ठण्ड भी.... अपने से हो ऐसा....?

'ननकू' जासूस और घर से निर्वासन

आज तो आप बाहर ही रहो... उनकी बुराई कर रहे थे... पता चल गया...

'ननकू' जासूस और घर से निर्वासन

साथियों, घर के बाहर की राजनीति संभालना तो फिर भी आसान है, पर घर के अंदर के 'इंटेलिजेंस नेटवर्क' से पार पाना नामुमकिन है। कल की ही बात है, मैं पप्पू पानवाले की गुमटी पर अपने पुराने परिचित 'ननकू' के साथ बैठा था—ये वही ननकू, जिसने आधार कार्ड के बहाने मेरी 'मॉडल' वंशावली निकालने की कोशिश की थी।

ननकू अपनी आदत के मुताबिक 'सिस्टम' और 'देश' की बातें कर रहा था, और मैंने भी जोश में आकर अपनी 'होम-मिनिस्टर' (श्रीमती जी) के कड़े अनुशासन की समीक्षा शुरू कर दी। मैंने कह दिया....'अरे ननकू भाई, घर में तो मेरा ही प्रोटोकॉल चलता है, श्रीमती जी तो बस मेरी आज्ञा का पालन करती हैं!'

मुझे क्या पता था कि ननकू के सामने की गई यह 'बहादुरी' मेरे अपने ही बेटे ने सुन ली है। जब मैं शाम को बड़े ठाठ से घर पहुँचा, तो दरवाज़े पर ही बेटे ने मुझे रोक लिया। वो मेरे कान में फुसफुसा कर 'खतरे का सायरन' बताया **'पापा, आज तो आप बाहर ही रहो... ननकू अंकल के सामने आप मम्मी की बुराई कर रहे थे न, उन्हें सब पता चल गया है!'**

श्रीमती जी बेलन थामे 'सर्जिकल स्ट्राइक' की तैयारी में खड़ी थी। साहब, ननकू के सामने अपनी साख बनाने के चक्कर में आज मेरा ही 'चालान' कटने वाला है। उस दिन समझ आया कि कोई भले विदेश में जाकर बुराई कर दे हम अभी इस हैसियत पर नहीं पहुंचे हैं कि श्रीमती जी के बारे में भी कुछ कह सकें. यह भी मान गए कि पत्नी की बुराई करना उस **'हाई-प्रोफाइल'** घोटाले जैसा है जिसकी फाइल सीधे भगवान के पास नहीं, बल्कि सीधे श्रीमती जी के पास पहुँचती है! अब स्थिति यह है कि 'विराम संधि' के लिए मुझे या तो नया खिलौना मुन्ने को रिश्वत में देना होगा, या फिर आत्मसमर्पण.

ननकू का 'नल-जल' मिशन और झाजी की बाल्टी

ननकू का 'नल-जल' मिशन और झाजी की बाल्टी

साथियों, चुनाव आते ही हमारे मोहल्ले के 'ननकू नेता' की सक्रियता किसी सुपरसोनिक विमान से भी तेज़ हो जाती है। जो ननकू कल तक आधार कार्ड में मेरी दूसरी बीवी ढूँढ रहा था, आज वह बाल्टी थामे मेरे घर के अंदर खड़ा है।

चुनाव जब सर पर होता है, तब वादों की जो झड़ी लगती है आँखें भर आती है और मन कहने लगता है अच्छे दिन आ गए. हमारे मोहल्ले में हम लोगों का नहाना इस बात पर निर्भर है कि हमारे नल देवता खुश हैं या नहीं. नहाना तो चलो किसीसे कहना मत अन्दर कौन देखने आता है नहाए कि नहीं पर "वो" कैसे रोकें. हमने भी नेताजी से पानी की शिकायत की. उन्होंने ननकू को जिम्मा सोंपा. नेताजी चुनाव जीत गए आखिर जितना ही था वादे भी आसमान से तारे तोड़ने वाले थे. अब ननकू भाई पूरी शिद्दत से अपने नेताजी का चुनावी वादा निभाने में एक्टिव हो गए। एक हाथ में पानी से भरी बाल्टी और दूसरा हाथ मेरे कंधे पर ऐसे रखा है जैसे मैं उनका सबसे करीबी 'वोट बैंक' होऊँ। ननकू बड़े गर्व से मुस्कुराते हुए कह रहे हैं....**'अब तो खुश...नेताजी ने वादा किया था तुम्हारे घर तक पानी नहीं पहुँचाया तो मेरा नाम नहीं!'** ये ले और क्या चाहिए जब पानी तेरे दरवाजे पर चलकर आए.

पीछे खड़ी श्रीमती जी के चेहरे पर वो 'सेंसर' वाली मुस्कान आ गई जो बता रही थी कि उन्हें ननकू की बातों से ज़्यादा उस बाल्टी के पानी में दिलचस्पी है। मैं हक्का-बक्का होकर ननकू के इस 'नल-जल' मिशन को देख रहा हूँ।

साहब, ये ननकू जैसे लोग भी बड़े कमाल के होते हैं। पाँच साल तक मोहल्ले का नल सूखा रहे तो इन्हें फर्क नहीं पड़ता, पर वोट की गंध आते ही ये बाल्टी क्या, पूरे का पूरा टैंकर अपने कंधों पर उठाने को तैयार हो जाते हैं। उस दिन समझ आया कि **लोकतंत्र में पानी केवल प्यास बुझाने के लिए नहीं, बल्कि 'चुनावी नैया' पार लगाने के लिए भी इस्तेमाल होता है!**

'मन की बात' और झाजी का अंडरग्राउंड मिशन

'मन की बात' और झाजी का अंडरग्राउंड मिशन

साथियों, हमारे देश में 'मन की बात' का अपना एक प्रोटोकॉल है,पिछले बारह साल से यह प्रचलन शुरू हुआ है जिसका शीर्षक होता है **“मन की बात”,** सही बात है वो बताएं तो भी किसे. हर महीने के अंतिम रविवार को सुबह ग्यारह बजे प्रसारण होता है. उन्हें क्या मालूम यहाँ तो रोज़ मन की बात नहीं **मन की भड़ास** होती है और उस पर भी ये कि इसका कोई निश्चित टाइम भी नहीं दिन में दस बार भी. मेरे घर का प्रोटोकॉल थोड़ा 'अंडरग्राउंड' किस्म का है। जब भी ऊपर बालकनी से 'होम-मिनिस्टर' (श्रीमती जी) का संबोधन शुरू होता है, तो मेरा एकमात्र लक्ष्य होता है—अपनी लोकेशन छुपाना।

मैं टिफिन और अखबार थामे घर के एक संकरे कोने में दुबककर निकलने की कोशिश कर रहा हूँ, जैसे कोई जासूस किसी ख़ुफ़िया मिशन पर हो। पर साहिब, श्रीमती जी की 'रडार' वाली नज़रें! उन्होंने बालकनी से झुककर मुझे देख ही लिया और उनका वही चिर-परिचित फरमान जारी हुआ....**'ओ..सुनो.. कहाँ गए... मेरे मन की बात तो सुनो....'**

सच मानिए, रेडियो वाली 'मन की बात' में तो फिर भी **हम चैनल बदल सकते हैं, पर घर की इस 'लाइव ब्रॉडकास्ट' में न तो कोई 'म्यूट' बटन है और न ही 'पॉज़' करने की सुविधा।** श्रीमती जी के मन की बात का एजेंडा कभी खत्म नहीं होता—इसमें राशन की लिस्ट से लेकर पड़ोसियों की पंचायत तक सब शामिल होता है।

उस दिन समझ आया कि झाजी चाहे कितने भी बड़े 'समदृष्टि' व्यंग्यकार बन जाएँ, पर बालकनी से आने वाली **एक आवाज़ उन्हें अपनी असली 'अंडरग्राउंड' औकात याद दिला ही देती है!"**

ननकू का संबोधन और घर की 'सुप्रीम बॉस'

ननकू का संबोधन और घर की 'सुप्रीम बॉस'

राजनीति में शब्दों का बड़ा खेल होता है। अभी मोदी जी नवनियुक्त अध्यक्ष को संबोधित करके एक नए शब्द का प्रचलन शुरू कर दिया. और जैसा कि उनका परिधान हो या शब्दों का चयन आप यकीन नहीं करोगे 2014 में वोट डालकर निकलते समय मोबाइल से जो पोज़ लिया मुझे अटपटा लगा ये क्या का रहे हैं बाद में पता चला कि इसे "सेल्फी" कहते हैं इसके बाद जो "सेल्फी" का जो दौर चला आपके सामने है. उस दिन मेरा मित्र कहो या कुछ भी ननकू घर आया और उसी स्टाइल में "**..और बॉस क्या हाल है...**" बाहर उसने यह संबोधन किया होता तो भी चल जाता पत्नी के सामने...?

उसने जोश में आकर मुझे 'बॉस' क्या कह दिया, मेरी तो सिट्टी-पिट्टी ही गुम हो गई।

पीछे खड़ी श्रीमती जी के तेवर! जैसे ही हाथ बाँधकर, भौहें सिकोड़े वो जिस 'कोपदृष्टि' से हमें देखा.., हमारी छठी इन्द्रिय ने मेसेज पढ़ लिया कि ननकू का ये 'बॉस' वाला संबोधन उन्हें कतई रास नहीं आया है। उनके चेहरे के भाव कह रहे हैं—'अच्छा! तो तुम बॉस बन रहे हो? इन्हें जाने दो फिर बताती हूँ कि असली बॉस की कुर्सी किसके पास है।'. मैंने घबराहट में उसे टोकते हुए कहा **'अरे धीरे बोल... मरवाएगा क्या... वो देख पीछे साक्षात् सुप्रीम बॉस खड़ी हैं!'**

साहब, ननकू जैसे लोग तो 'बॉस' बोलकर निकल जाते हैं, पर उस एक शब्द का घरेलु 'स्पष्टीकरण' (Show-cause notice) हमें हफ़्तों तक रसोई में देना पड़ता है। उस दिन समझ आया कि दुनिया के लिए आप चाहे 'नवनियुक्त अध्यक्ष' हों या 'बॉस', **पर घर की दहलीज पार करते ही आपका दर्जा एक 'अस्थाई कर्मचारी' से ज़्यादा कुछ नहीं होता.**

अस्पताल का 'नूर' और श्रीमती जी का डिस्चार्ज

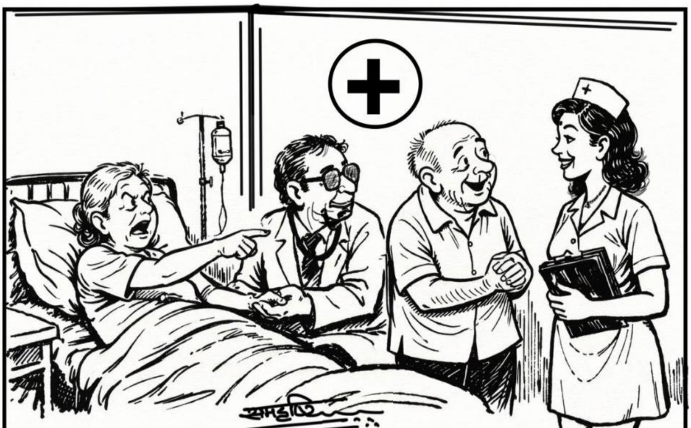

अस्पताल का 'नूर' और श्रीमती जी का डिस्चार्ज

साथियों, अक्सर कहा जाता है कि सेवा में मेवा मिलता है, पर मुझे क्या पता था कि श्रीमती जी की सेवा करते-करते मुझे अस्पताल में ही 'नूर' के दर्शन हो जाएंगे। हुआ यूँ कि श्रीमती जी की तबीयत बिगड़ी और मैंने उन्हें आनन-फानन में अस्पताल में भर्ती करवा दिया।

एक आदर्श पति की तरह मैं उनके बिस्तर के पास तैनात था, पर तभी प्रवेश हुआ उस सार-संभाल करने वाली सुंदर सी नर्स का।

साहब, नर्स क्या थी, साक्षात् 'हीलिंग' की मूरत थी! उसकी मुस्कान देखकर मैं तो ये भूल ही गया कि मैं यहाँ 'तीमारदार' बनकर आया हूँ, 'मरीज़' बनकर नहीं।

डॉक्टर साहब चेकअप करने आए, नर्स फाइल थामे मुस्कुरा रही थी और मैं, हाथ जोड़कर मंद-मंद मुस्कुराते हुए नर्स की 'सेवा' को निहार रहे था। अब बेड पर लेटी श्रीमती जी का 'सेंसर' भी देखिए! उन्होंने तुरंत भांप लिया कि मेरे चेहरे पर ये जो 'निर्वाण' वाली चमक है, उसका कारण उनकी सेहत में सुधार नहीं, बल्कि सामने खड़ी नर्स है।

श्रीमती जी ने आव देखा न ताव, डॉक्टर साहब से गुहार लगाई....**'डॉक्टर प्लीज़... छुट्टी दे दो... ये तो नहीं चाहेंगे कि मुझे यहाँ से छुट्टी मिले!'**

साहब, कसम से, उस वक्त नर्स की सुंदरता से ज़्यादा मुझे अपने अस्तित्व की फिक्र होने लगी। उस दिन समझ आया कि पत्नी चाहे कितनी भी बीमार क्यों न हो, पति **की 'नज़र' कहाँ है, यह स्कैन करने का सॉफ्टवेयर उनका कभी 'हैंग' नहीं होता!**

चांदी जैसे बाल और पेंशन का 'कंगाल' हाल

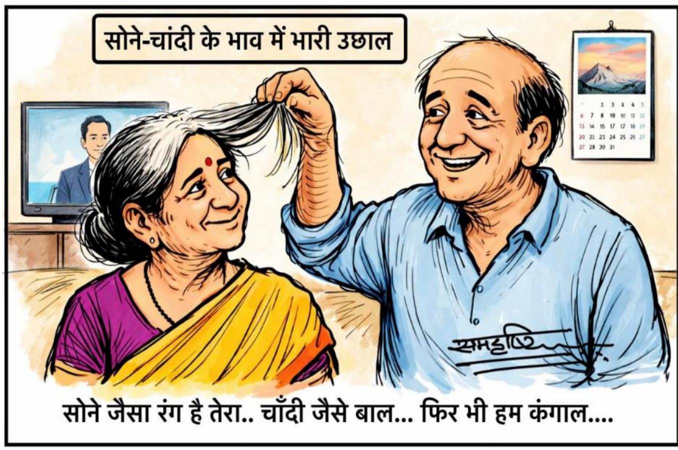

चांदी जैसे बाल और पेंशन का 'कंगाल' हाल

उम्र के इस पड़ाव पर अक्सर लोग मुझसे पूछते हैं कि झाजी, बालों में सफेदी तो आ गई पर क्या आपने कुछ 'सोना-चांदी' भी जोड़ा है? मैं उन्हें टीवी पर चल रही ब्रेकिंग न्यूज़ की ओर इशारा करके कहता हूँ—साहब, मेरे घर में तो 'सोने-चांदी' का भाव 24 घंटे चढ़ा ही रहता है, बस फर्क इतना है कि वो तिजोरी में नहीं, बल्कि सीधे चेहरे और बालों पर नज़र आता है।

टीवी पर खबर आ रही थी 'सोने-चांदी के भाव में भारी उछाल'। मैंने भी मौके का फायदा उठाकर श्रीमती जी की तारीफ में वो फिल्मी गाना गुनगुना दिया....**'सोने जैसा रंग है तेरा.. चाँदी जैसे बाल...'**। मैं बड़े प्यार से उनके बालों की उस 'कीमती सफेदी' को सहला रहा था पर दिल की गहराई में एक करारा सच भी दबा हुआ।

मैंने मुस्कुराते हुए बात पूरी की....**'फिर भी हम कंगाल!'**

साहब, ये मध्यमवर्गीय पति की विडंबना ही है! बीवी के चेहरे की चमक सोने जैसी, और बालों की सफेदी चांदी जैसी शुद्ध, पर इस 'धात्विक' सुंदरता के बावजूद महीने की आखिरी तारीख को पेंशन की पासबुक हमें अपनी असली 'कंगाली' की याद दिला ही देती है। उस दिन समझ आया कि दुनिया के लिए सोना-चांदी निवेश (Investment) हो सकता है, पर एक पति के लिए तो ये केवल 'तारीफ' करने का वो ज़रिया है जिससे कम से कम घर में शांति का 'अमूल्य' वातावरण बना रहे!

हुस्न का दीदार और 'बुआजी' का अवतार

हुस्न का दीदार और 'बुआजी' का अवतार

अक्सर कहा जाता है कि अतिथि देवो भवः, पर अगर अतिथि कोई सुंदर महिला हो, तो हम जैसे पतियों के भीतर का 'देवता' कुछ ज़्यादा ही जाग्रत हो जाता है। अभी कल की ही बात है, हमारे घर एक बेहद खूबसूरत और आधुनिक महिला का आगमन हुआ। उन्हें देखते ही मेरी 'समदृष्टि' में अचानक एक नई चमक आ गई और मैं अपनी उम्र की तमाम 'सफेदियाँ' भूलकर उनकी आवभगत में खड़ा हो गया।

मैंने हाथ जोड़े, चेहरे पर 440 वोल्ट की मुस्कान लिए और पसीने-पसीने होकर उस महिला का स्वागत करने लगा। मेरा रोम-रोम बस यही सोच रहा था कि काश! विधाता ने ऐसी 'हीलिंग' वाली संगति मुझे पहले दी होती।

पर तभी श्रीमती जी का **'मास्टर स्ट्रोक'** आया। उन्होंने बड़े ही स्नेह से, पर उतनी ही चालाकी से अपने बेटे (मुन्ने) को आवाज़ दी और उस महिला का परिचय कुछ इस अंदाज़ में कराया कि मेरे सारे अरमानों पर माघ का ठंडा पानी फिर गया।

श्रीमती जी बोलीं....**'बेटा... इनसे मिलो... ये तुम्हारी... बुआ जैसी हैं....'**

साहब, वो 'बुआ' शब्द सुनते ही मेरी स्थिति उस 'पीटे हुए शेर' जैसी हो गई जिसका सारा शिकार एक ही पल में शाकाहारी भोजन में बदल गया हो। उस एक संबोधन ने न केवल उस महिला की सुंदरता को 'रिश्तेदारी' की चादर में लपेट दिया, बल्कि मेरी आवभगत को भी 'पारिवारिक जिम्मेदारी' बना दिया। उस दिन समझ आया कि घर में आई किसी भी 'खूबसूरत आफत' को ठिकाने लगाने के लिए बीवियों के पास 'बुआ' और 'मौसी' जैसे अस्त्र हमेशा तैयार रहते हैं!

तिल के लड्डू और 'दान' की गरिमा

कैसे लगे... मायके से आए... कहा था... किसी गरीब को दान.....

तिल के लड्डू और 'दान' की गरिमा

संक्रांति का पर्व आते ही घरों में दान-पुण्य की चर्चा तेज़ हो जाती है। शास्त्र कहते हैं कि इस दिन किसी गरीब को तिल का दान करना बहुत फलदायी होता है, पर मेरे घर के 'शास्त्र' थोड़े अलग हैं। यहाँ दान देने से पहले उसका 'टेस्टिंग ट्रायल' सीधे मेरे ऊपर ही किया जाता है।

साहब क्या बताऊँ मैं मज़े से तिल के लड्डू का लुत्फ़ उठा रहा था। चेहरा ख़ुशी से दमक रहा था, पर तभी श्रीमती जी पीछे से हाथ बाँधे प्रकट हुईं और अपनी चिर-परिचित मुस्कान के साथ एक ऐसा 'परमाणु बम' फोड़ा कि लड्डू गले में ही अटक गया.... कसम से।

श्रीमती जी बड़े लाड़ से बोलीं....**'कैसे लगे? मायके से आए हैं... माँ ने कहा था कि किसी गरीब को दान कर देना!'**

साहब, उस एक वाक्य ने मेरी स्थिति साफ़ कर दी। मैं जो खुद को घर का 'बॉस' समझकर लड्डू खा रहा था, एक पल में श्रीमती जी के मायके की नज़र में **'सबसे योग्य गरीब'** घोषित कर दिया गया। उस दिन समझ आया कि **पत्नी के मायके से आए पकवानों का असली मज़ा तब तक ही है जब तक आपको अपनी 'आर्थिक और सामाजिक हैसियत' का पता न चले!** उस दिन के बाद से जब भी कोई दान की बात करता है, मुझे अपने ससुराल वाले लड्डू ही याद आते हैं।

'युवा दिवस' और झाजी का सफाई अभियान

'युवा दिवस' और झाजी का सफाई अभियान

दुनिया के लिए 12 जनवरी 'युवा दिवस' हो सकता है, पर मेरे घर में तो यह 'श्रमदान दिवस' के रूप में मनाया जाता है। घर में ऐसा कोई नियत दिन नहीं होता, सुबह हुई और क्या कहो... हनुमान जी को भी समुद्र पार करवाने के सोई हुक्ति को जाग्रत किया था तो मैं क्या चीज़ हूँ.

श्रीमती जी की कूटनीति भी वही—वो सीधे काम नहीं बतातीं, पहले मेरे अन्दर की सुप्त **'युवा शक्ति'** को जाग्रत करती हैं।

उम्र चाहे पेंशन वाली हो जाए, पर जब बात घर की सफाई की आती है, तो श्रीमती जी हमें 'स्वामी विवेकानंद' का हवाला देकर युवा बना ही देती हैं।

शाम होते होते मैं थका-हारा, पीठ झुकाए एक छोटे से स्टूल पर बैठ गया, मानो मेरा सारा 'युवा जोश' पोंछे की बाल्टी में बह गया हो। हालत तो तब देखने लायक हो गई श्रीमती जी ने अपनी सहेली कान में फुसफुसाते हुए मेरी हालत पर मंद-मंद मुस्कुरा रही थी और कहा ....**'आज तो मैंने अभी भी कितने युवा हो कह-कहकर... घर की सारी सफाई-धुलाई करवा ली!'**

साहब, कसम से, जब तक मैं झाड़ू-पोंछा कर रहा था, मुझे लग रहा था कि मैं वाकई किसी 'फिटनेस मिशन' पर हूँ। पर काम खत्म होते ही जब कमर ने जवाब दिया, तब समझ आया कि **ये 'युवा' होने का तमगा दरअसल एक मज़दूरी का कॉन्ट्रैक्ट था, जिसमें कोई 'रिटायरमेंट' नहीं है।** उस दिन समझ आया कि झाजी...सफेद बाल चाहे कितनी भी चांदी बिखेरें, पर **श्रीमती जी की तारीफों के जाल में फँसकर वो हमेशा एक 'अवैतनिक युवा मज़दूर' ही बने रहेंगे!**

समदृष्टि भवन और बिना विभाग का 'मालिक'

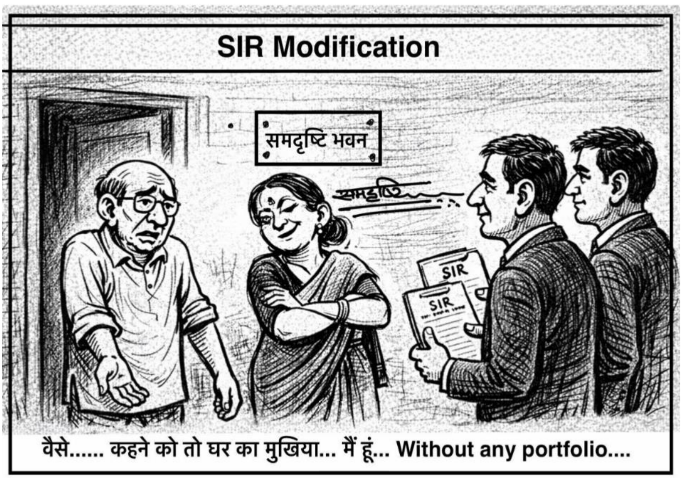

समदृष्टि भवन और बिना विभाग का 'मालिक'

दस्तावेजों में मालिक होना और हकीकत में **बिना विभाग का मंत्री** होना, यह मध्यमवर्गीय गृहस्थी का असली जंजाल है।

अक्सर कहा जाता है कि घर का मुखिया वो होता है जिसका नाम घर की नेमप्लेट और दस्तावेजों पर दर्ज हो। मैंने भी बड़े शौक से अपने घर का नाम रखा....**'समदृष्टि भवन'** और कागजों पर खुद को मालिक घोषित कर दिया।

पर साहब, दस्तावेजों की दुनिया और रसोई घर की दुनिया में वही अंतर है जो चुनाव पूर्व वादों और बजट के बाद की महंगाई में होता है।

अभी कल ही की बात है, घर में कुछ 'SIR Modification' (सरकारी या व्यवस्थागत सुधार) की चर्चा चल रही थी। दो सजीले अधिकारी फाइलें थामे घर पर आए और श्रीमती जी के सामने ही पूछने का दुस्साहस कर दिया. मैं हक्का-बक्का होकर कभी उन्हें देखता कभी श्रीमती जी को। अजीब परिस्थिति पैदा कर दी उनके एक सवाल ने. श्रीमती जी हाथ बाँधकर, चेहरे पर वो 'सेंसर' वाली मुस्कान लिए पास में ही खड़ी थी जो सीधे तौर पर सत्ता के विकेंद्रीकरण की घोषणा कर रही थी।

मुझे ज़वाब देना ही था कि न 'वो' रूठे और सरकारी औपचारिकता भी पूरी हो जाए. मैंने उन अधिकारियों से बड़े ही मासूम अंदाज़ में कहा....**'वैसे... कहने को तो घर का मुखिया... मैं हूँ...किन्तु Without any portfolio....'**

साहब, कसम से, उस वक्त मुझे अपने ही घर में 'अतिथि' जैसा महसूस हुआ। कागजों पर तो मैं मालिक हूँ, पर घर में कौन सा 'पोर्टफोलियो' (विभाग) मेरे पास है? राशन का विभाग श्रीमती जी के पास, रिमोट कंट्रोल का विभाग सहेलियों के पास और सफाई का टारगेट मेरे पास! उस दिन समझ आया कि झाजी... **'मालिक' होना केवल एक भ्रम है, असली सत्ता तो उस मुस्कान के पास है जो बिना किसी हस्ताक्षर के पूरे 'समदृष्टि भवन' को संचालित करती है!"** ✍ संभलकर चलिए, आगे 'समदृष्टि' का मोड़ है! ---

बीजेपी के नारे और 'विभाजित' झा जी

बीजेपी के नारे और 'विभाजित' झा जी

नारे हमेशा से किसी लक्ष्य पूर्ति के लिए जान होते हैं चाहे स्वतंत्रता आन्दोलन या इमरजेंसी के समय नारों ने हमेशा एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है.आज जहाँ देश के लिए नारे राजनीति का हिस्सा होते हैं, वाही नारे एक पति के लिए ये सीधे-सीधे 'शांति भंग' का वारंट बन बन जाएँ तो क्या हो।

आजकल टीवी पर दो नारे बड़े मशहूर हैं—एक है **'सबका साथ, सबका विकास'** और दूसरा **'बँटोगे तो कटोगे'**। मैं सोचता था कि ये देश की प्रगति के सूत्र हैं, पर क्या हो जब श्रीमती जी इन्हें मेरे 'चरित्र प्रमाणपत्र' (Character Certificate) से जोड़ दे।

एक समय मैं अति उत्साही होकर नारे लगते मंच पर पहुँच गया.मेरे एक तरफ एक कन्या तो दूसरी तरफ श्रीमती जी खड़ी थी. मैं धर्मनिरपेक्षता का लबादा ओढ़े **'सबका साथ, सबका विकास'** पर ज्यादा जोर दे रहा था मुझे क्या पता श्रीमतीजी उस नारे का क्या अर्थ ले रही थी मैं तो बीच में खड़ा मुस्कुरा रहा हूँ और नारे.., मानो किसी अंतरराष्ट्रीय शिखर सम्मेलन का हिस्सा होऊँ। एक तरफ आधुनिकता की प्रतीक एक सुसज्जित कन्या है, जिसे देखते ही मेरे मन का 'विकास' होने लगा तो दूसरी तरफ श्रीमती जी। तभी श्रीमती जी का 'सेंसर' वाला चेहरा सामने आया—हाथ बाँधकर, गुस्से में तिलमिलाई हुई!

श्रीमती जी ने कन्या की ओर इशारा करते हुए मेरे कान में फुसफुसा कर बीजेपी के ही अंदाज में कड़ा प्रहार किया....**'अगर सबके साथ सबका विकास ढूँढोगे... तो याद रखना... बँटोगे तो कटोगे!'**

साहब, कसम से, उस एक वाक्य ने मेरी सारी राजनीतिक समझ धरी की धरी रहने दी। उस दिन समझ आया कि झाजी हमारे लिए अगर शांति चाहते हो तो 'सबका साथ' का मतलब केवल और केवल श्रीमती जी का साथ है, वरना 'बँटने' का नतीजा सीधा घरेलू 'बजट' और 'सेहत' की कटौती में निकलता है!"

7 डिग्री का टॉर्चर और उम्र का 'नम्बर' गेम

7 डिग्री का टॉर्चर और उम्र का 'नम्बर' गेम

आजकल सोशल मीडिया पर एक जुमला बड़ा मशहूर है—'Age is just a number' यानी उम्र तो बस एक नंबर है। मैंने भी इस बात को बड़े 'सीरियसली' ले लिया था, पर जैसे ही जनवरी की सुबह आठ बजे थर्मामीटर ने 7 डिग्री का 'नंबर' दिखाया, मेरा सारा दार्शनिक ज्ञान पसीने की जगह कंपकंपी बनकर निकलने लगा।

सुबह के 8 बज रहे हैं सोसाइटी के नियम के अनुसार दूध वगैरा जो चाहिए निचे आकर लो. एक आज्ञाकारी निवासी होने के नाते 'पैक्ड आइटम' की तरह मफ़लर और जैकेट में लिपटकर पार्किंग में उतरा ठंड इतनी कि चाय का कप हाथ में पीने के हिसाब से नहीं बल्कि कप की गर्मी महसूस होती रहे। दांत ऐसे बज रहे थे मानो पड़ोस के घर में कंस्ट्रक्शन का काम चल रहा हो। मेरी हालत देखकर निचे चौकीदार ने कहा....**'क्या झा जी.. तापमान तो बस एक नंबर है!'**

साहब, कसम से, 25 की उम्र में हम इसी ठंड में 'माघ स्नान' के संकल्प लिया करते थे। पर अब हाल यह है कि गीजर का बटन दबाने के लिए भी हमें घर में 'बहुमत' साबित करना पड़ता है। उस दिन समझ आया कि झाजी के लिए 'नंबर' केवल दो ही जगह मायने रखते हैं—**एक तो बैंक की पेंशन वाली पासबुक में और दूसरा सर्दी के थर्मामीटर में; क्योंकि एक के कम होने पर दिल बैठ जाता है और दूसरे के कम होने पर पूरा शरीर!"**

गैर-परिवारवादी बॉस और घर का 'शाश्वत' नेतृत्व

गैर-परिवारवादी बॉस और घर का 'शाश्वत' नेतृत्व

आजकल टीवी पर राजनीति में 'परिवारवाद' को लेकर बड़ी बहस चलती है। ननकू बताता हैं कि कैसे गैर-परिवारवादी पार्टियों में बॉस हर 2-5 साल में बदल जाता है—नया अध्यक्ष, नया नेतृत्व, नया जोश! मैं भी बड़े गौर से ये बातें सुनता हूँ पर नज़र घुमकर घर की 'सुप्रीम बॉस' की ओर आकर ठहर जाती है.

मैं हाथ पर गाल टिकाए एक कुर्सी पर बैठा इस पर व्यंग्य लिखने सोंच रहा था. नज़र रह रह कर श्रीमती जी पर टिक जाती जैसे मेरा 'इस्तीफा' वर्षों से लंबित पड़ा हो। अक्सर ऐसा होता है जब भी BOSS टॉपिक पर लिखने बैठता हूँ नज़र श्रीमती जी पर जाकर अटक जाती है. और श्रीमती जी, हाथ कमर पर रखकर, पूरे आत्मविश्वास के साथ एक उंगली से मेरी ओर इशारा करके 'सेंसर' वाली मुस्कान लिए मानो कह रही हो ....**'ये बॉस पार्टी के लिए दो साल पाँच साल.... मैं तो अंतिम सांस तक... सोच लो....'**

साहब, कसम से, राजनीति में तो फिर भी कार्यकाल खत्म होने की एक उम्मीद रहती है, पर गृहस्थी के इस 'संगठन' में नेतृत्व परिवर्तन की मांग करना भी सीधे **'अनुशासनात्मक कार्रवाई'** को न्योता देना है। यहाँ जो एक बार 'बॉस' बन गया, वो जीवनभर के लिए 'नवनियुक्त' ही रहता है। उस दिन समझ आया कि हम जैसे आम लोग के लिए 'लोकतंत्र' का असली मतलब बस इतना ही है कि हर 5 साल बाद सरकार भले ही बदल जाए, **पर घर में श्रीमती जी का 'एकछत्र राज' कभी नहीं बदलता!**

'वाह क्या सीन है'— लाइव न्यूज़ का जंजाल

'वाह क्या सीन है'—लाइव न्यूज़ का जंजाल

साथियों, आजकल मीडिया का ज़माना है। लोग कहते हैं कि पत्रकारिता लोकतंत्र का चौथा स्तंभ है, पर मुझे तो ये स्तंभ किसी 'बिजली के खंभे' जैसा लगता है—जिस पर चढ़ो तो करंट भी लग सकता है। अभी कल की ही बात है, मैं अपनी धुन में सड़क पर चला जा रहा था कि अचानक पैर फिसला और मैं सीधे एक बड़े से गड्ढे में जा गिरा।

मैं मदद के लिए हाथ-पाँव मार ही रहा था कि अचानक एक न्यूज़ रिपोर्टर कैमरे और माइक के साथ प्रकट हुआ। मुझे लगा शायद वो मुझे बाहर निकालने के लिए हाथ बढ़ाएगा, पर उसने माइक मेरे मुँह के पास लाकर बड़े उत्साह से चिल्लाना शुरू किया....**'वाह क्या सीन है! दर्शकों, आप अपनी स्क्रीन पर लाइव देख सकते हैं... एक आम नागरिक व्यवस्था के गड्ढे में गिरकर कैसा महसूस कर रहा है!'**

मैंने कीचड़ में सना हुआ, तड़पता हुआ अपना हाथ उठाया, पर रिपोर्टर साहब अपनी टीआरपी (TRP) के चक्कर में पूरी तरह 'मगन' थे। उनके चेहरे के भाव ऐसे थे मानो उन्हें कोई बड़ी 'ब्रेकिंग न्यूज़' मिल गई हो। पीछे से एक बच्चा और स्कूटर सवार भी मज़े से गुज़र रहा था, पर पत्रकार महोदय तो जैसे मेरे लिए प्रकट हुए हों. ऐसा लग रहा था जैसे ये कोई सड़क का गड्ढा नहीं, बल्कि कोई 'पब्लिक शो' चल रहा हो।

साहब, कसम से, उस वक्त मुझे अपने दर्द से ज़्यादा उस रिपोर्टर की संवेदनहीनता पर तरस आ रहा था। मैंने कराहते हुए कहा....**'भाई, पहले बाहर तो निकालो, फिर बताऊँगा कि कैसा महसूस हो रहा है!'** पर जवाब मिला....'अरे झा जी, आप बस इस पोज़ में बने रहिये, लाइटिंग एकदम नेचुरल है!' उस दिन समझ आया कि **आजकल के दौर में दुर्घटना सहायता का विषय नहीं रही, वह केवल 'कंटेंट' बन गई है।**

ननकू का 'बॉस' संबोधन और श्रीमती जी का बेलन

अरे कुछ नहीं... गुप्ता जी आए... उन्होंने कहा और <u>बॉस</u>.....
ये नाराज...

ननकू का 'बॉस' संबोधन और श्रीमती जी का बेलन

साथियों, दुनिया के लिए आप चाहे कितने भी बड़े अफसर हों, पर घर के अंदर आपकी हैसियत एक 'अवैतनिक कार्यकर्ता' से ज़्यादा नहीं होती। राजनीति में जहाँ 'बॉस' बनना गर्व की बात है, वहीं घर में यह संबोधन सीधे 'बेलन-तंत्र' को जाग्रत कर देता है। अभी कल की ही बात है, हमारे ननकू भाई घर पधारे। उन्होंने बड़े उत्साह में मुझे देखते ही कह दिया....**'और बॉस! क्या हाल हैं?'**

मैं सिर पर पट्टी बाँधे, पस्त हालत में सोफे पर बैठा था, मानो अभी-अभी किसी मोर्चे से हारकर लौटा हूँ। ननकू भाई तो अपना 'बॉस' वाला चुनावी जुमला बोलकर बड़े मज़े से हाथ बढ़ाया, पर पीछे खड़ी श्रीमती जी का रौद्र रूप पर उसने गौर नहीं किया!

श्रीमती जी हाथ बाँधकर, ननकू को ऐसे देखा मानो वो कोई 'घुसपैठिया' हो जो घर की सत्ता संरचना (Power Structure) को चुनौती दे रहा है। मेरे सिर के ऊपर चमकता हुआ 'बेलन' वाला थॉट-बबल उनको कैसे दिखाई देता मैंने धीरे से क्योंकि यह बोलने की हालत भी नहीं बची थी. कराहते हुए कहा ....**'अरे कुछ नहीं... गुप्ता जी आए और उन्होंने भी बॉस कह दिया... बस इसी बात पर ये नाराज़ हैं!'**

साहब, कसम से, उस एक 'बॉस' शब्द की वजह से मेरे सिर की पट्टी और गहरी हो गई। उस दिन समझ आया कि हम पतियों के लिए घर पर 'बॉस' होना एक प्रतिबंधित सपना है। **घर में शांति चाहिए, तो खुद को हमेशा 'कार्यकर्ता' ही घोषित करके रखें, वरना श्रीमती जी का बेलन यह याद दिलाने में देर नहीं लगाता कि असली 'सुप्रीम बॉस' की कुर्सी पर कौन विराजमान है!**

वेनेजुएला का तेल और झा जी का 'खूफिया' मिशन

वेनेजुएला का तेल और झा जी का 'खूफिया' मिशन

आजकल वैश्विक राजनीति इतनी पेचीदा हो गई है कि एक आम आदमी के लिए सब्जी में तड़का लगाना भी 'अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा' का मामला बन गया है। टीवी पर वेनेजुएला में तेल के चक्कर में राष्ट्रपति का अपहरण तो झा जी किस खेत की मूली हैं. कसम से ट्रंप साहब की तीखी धमकियों को सुनकर मेरी तो रूह ही कांप गई। मुझे लगा कहीं मेरी एक लीटर सरसों तेल की खरीदारी अंतरराष्ट्रीय साजिश का हिस्सा न बन जाए!

श्रीमती जी ने कहा आज खाना बनाना हो तो तेल ले आओ. मैंने श्रीमती से कहा धीरे बोल कहीं पडौस से किसीने trump साहब को कह दिया झा जी तेल आपके वहां से न खरीदकर पास की शॉप से खरीद रहे हैं तो दिक्कत हो जाएगी. मैंने तुरंत सूटबूट उतारे और अपनी अपनी उसी 'परोपकारी' बनियान में, 'समदृष्टि जनरल स्टोर' पर गया ताकि शक न हो. मैं काउंटर पर गया और दुबककर दुकानदार के कान में फुसफुसा कर कहा। आसपास ऐसे देखा जैसे मैं 'परमाणु बम' की सीक्रेट फाइल मांग रहा हूँ। मैंने बड़े ही रहस्यमयी अंदाज़ में कहा....**'किसी को पता न चले... बस एक लीटर तेल दे दो... वरना कहीं ट्रंप साहब अपहरण न करवा लें!'**

दुकानदार ने मुझे ऐसे देखा मानो मैं वेनेजुएला का कोई भगोड़ा नागरिक हूँ। साहब, कसम से, आजकल महंगाई ने वो दिन दिखा दिए हैं कि राशन की थैली लेकर घर लौटना किसी 'जंग' जीतकर लौटने जैसा लगता है। ऊपर से घर में श्रीमती जी (होम मिनिस्टर) का कड़ा ऑडिट!

उस दिन समझ आया कि मेरे लिए 'तेल का खेल' केवल वेनेजुएला तक सीमित नहीं है। असली डर तो ये है कि **अगर घर में 'तेल' खत्म हुआ, तो श्रीमती जी जो 'अपहरण' (नज़रबंदी) करेंगी, उससे ट्रंप साहब भी नहीं बचा पाएंगे!**

कटी पतंग और छत वाली पर 'नज़र'

सब जानती हूं... पतंग क्यों कटा..... खाना वो थोड़ी....

कटी पतंग और छत वाली पर 'नज़र'

साथियों, मकर संक्रांति का त्योहार आते ही आसमान रंग-बिरंगी पतंगों से भर जाता है। हर कोई अपनी पतंग की डोर थामे दूसरों की पतंग काटने की फिराक में रहता है, पर मेरे घर की छत पर 'पेंच' कुछ अलग ही तरह से लड़ाए जाते हैं।

संक्रांति के दिन आसमान पतंगों से भरा हुआ था और मैं बड़े उत्साह से अपनी चरखी थामे पेंच लड़ा रहा था। तभी बगल वाली छत पर एक सुंदर पड़ोसन अपनी पतंग उड़ाती नज़र आई। बस फिर क्या था, झाजी की 'समदृष्टि' पतंग से हटकर सीधे पड़ोस वाली छत पर जाकर टिक गई। नतीजा यह हुआ कि मेरी पतंग तो कटी ही, साथ ही पीछे खड़ी श्रीमती जी ने मेरा 'चालान' भी काट दिया।

श्रीमती जी ने हाथ में चरखी थामे बड़े ही व्यंग्यात्मक अंदाज़ में उंगली उठाकर कहा....**'सब जानती हूँ... पतंग क्यों कटा... खाना वो थोड़ी देगी...'**

साहब, कसम से, उस वक्त मुझे अपनी कटी हुई पतंग का उतना दुख नहीं हुआ, जितना इस बात का कि मेरा 'गुप्तचर' पकड़ा गया। उस दिन समझ आया कि **चाहे कितनी भी ढील दे दें, पर श्रीमती जी की नज़र की 'कन्नी' इतनी मज़बूत है कि वो आसमान में उड़ती पतंग और पड़ोस की छत पर टिकती नज़र, दोनों को एक साथ काट सकती हैं!** अब मैंने तौबा कर ली कि संक्रांति पर मैं पतंग उड़ाने के बजाय केवल लंगर लूटने में ही भलाई समझूंगा।"

घर की तीसरी आँख और फेसबुक फ्रेंड

घर की तीसरी आँख और फेसबुक फ्रेंड

आजकल डिजिटल मायाजाल का दौर है, जहाँ हर कोई एक 'वर्चुअल' मुखौटा ओढ़े घूम रहा है। हम जैसों के लिए सोशल मीडिया किसी तिलिस्म से कम नहीं, जहाँ अजनबी दोस्त बनते हैं और दिल की धड़कनें बेफालतू में रेस लगाने लगती हैं।

मैंने भी जोश-जोश में एक अनजान 'फेसबुक फ्रेंड' से चैटिंग शुरू की थी। प्रोफाइल पर लगी खिलखिलाती तस्वीर और मखमली बातों के जादू में आकर मैंने उन्हें डिनर का न्योता तक दे डाला। मन ही मन लड्डू फूट रहे थे कि चलो, इस उम्र में भी कोई 'प्रशंसक' तो मिला जैसा अपने रूपए का भाव अभी कायम है। पर असली धमाका तो तब हुआ जब नियत समय पर श्रीमती जी सजसंवर सामने आ धमकीं।

चैटिंग में पता ही नहीं चलता कि स्क्रीन के उस पार कौन बैठा है। जब श्रीमती जी ने रहस्यमयी मुस्कान के साथ कहा....**'चलो चलें डियर... डिनर पर... जिस फेसबुक फ्रेंड को तुमने कल बुलाया था, By the way... वो मैं ही थी...'**, मेरे पैरों तले ज़मीन खिसक गई। साहब, उस एक पल में मेरी सारी 'समदृष्टि' और डिजिटल बहादुरी धरी की धरी रह गई। समझ आया कि पत्नियों की 'छठी इंद्री' और उनका 'फेक प्रोफाइल' किसी भी जासूसी सॉफ्टवेयर से कहीं ज़्यादा मारक है। **अब डर ये था कि डिनर तो होगा, पर शायद उसमें 'बेलन' मुख्य डिश के रूप में परोसा जाएगा!**

डिजिटल निमंत्रण

डिजिटल निमंत्रण

5G और 6G के इस आधुनिक दौर में

हमारे घर पर गैस और पेट्रोल की काली छाया कुछ ऐसी पड़ी है कि

अब चूल्हे की लौ भी अर्थव्यवस्था देखकर जलती है।

आज डाक से एक शादी की पत्रिका आई।

मैंने सोचा ....चलो, भगवान की कृपा हुई…

कम से कम एक दिन तो भरपेट भोजन की व्यवस्था हो गई।

लिफाफा खोला…

पत्रिका पढ़ी…

और सच कहूँ तो पैरों के नीचे से जमीन खिसक गई।

पत्रिका में बड़े मार्मिक शब्दों में लिखा था—

"मन तो बहुत था आपको बुलाने का…

पर घर में इतनी भी गैस नहीं बची

कि बारातियों के लिए चूल्हा ....।"

अतः आपसे विनम्र निवेदन है कि

इस पत्र को ही हमारा निमंत्रण समझें

और......

चे दिए गए लिंक पर क्लिक करके

शादी में अपनी ऑनलाइन उपस्थिति दर्ज करें।

हाँ... हम जानते हैं आप बड़े खुद्दार हैं।

हमारे मना करने पर भी

बहू की मुँह दिखाई की रस्म निभाए बिना नहीं मानेंगे।

इसी भावना का सम्मान करते हुए

हमने सुविधा के लिए

नीचे QR कोड भी प्रिंट करवा दिया है।

सच है-

"न धुआँ उठा, न कड़ाही खनकी,

बस लिंक भेजा... और शादी निपट गई।"

गैस की राजनीति और मेरा सिलेंडर

देखो.. देखो.... अपना ही सिलेंडर देकर... प्रदर्शन में खाना खाने गए....

गैस की राजनीति और मेरा सिलेंडर

कल मुझसे एक ऐतिहासिक गलती हो गई। सुबह-सुबह श्रीमती जी का पूरा भाषण सुनने का दुर्भाग्य प्राप्त हुआ...। वैसे ये नई बात नहीं पर... खैर...

हुआ यूँ कि मोहल्ले में खबर फैली कि गैस की किल्लत के विरोध में कांग्रेस का प्रदर्शन होने वाला है। हमारे गली का ननकू तो जैसे क्रांतिकारी बन गया।

सुबह-सुबह दौड़ता हुआ आया — "झा भाई! जल्दी से सिलेंडर दो… बड़ी आफ़त है!"

मैंने सोचा बेचारे के घर गैस खत्म हो गई होगी। जनसेवा का मौका मिला है, मैंने अपना भरा हुआ सिलेंडर उसे सौंप दिया।

दोपहर पता चला कि गाँधी मूर्ति के सामने गैस संकट के विरोध में प्रदर्शन है। मैं भी.... महिला कार्यकर्ता वहाँ रोटियाँ बना रही थीं।

अब समस्या ये थी कि जली हुई रोटियाँ बन रही थीं… गैस की किल्लत है तो रोटी कच्ची हो... समझ आए..... जली हुई मतलब.... अब खाए कौन.... और मैं.... खाने का कोई मौका छोड़ नहीं सकता।

सो मैं बैठ गया — जनसेवा में खा भी ली।

फिर भाषण शुरू हुए… नारे लगे… "खुद कितनी बार माफी माँग लें… जमानत ले लें… पर घबराया हुआ तो PM ही है!"

नारे खत्म हुए, रोटियाँ खत्म हुईं… गैस सिलेंडर पता नहीं... और मैं घर लौट आया।

घर आते ही श्रीमती जी का रौद्र रूप प्रकट हो गया।

"खाना बना नहीं… गैस खत्म हो गई… सिलेंडर कहाँ है?"

मैंने डरते-डरते कहा — "वो... ननकू को दे दिया... गैस संकट के विरोध में प्रदर्शन था।"

श्रीमती जी बोलीं — "परसों बुक करवाई थी... कल आ भी गई.... कहाँ किल्लत है?"

मैंने धीरे से कहा — "उनकी आत्म-संतुष्टि के लिए... मेहनत तो कर रहे हैं बेचारे ... भले फल मिले न मिले..."

इतने में ननकू भी आ गया।

"और झा भाई... कैसा रहा प्रदर्शन?"

मैंने कहा — "भाई... वो सिलेंडर दे जा..."

ननकू बोला — "अरे उसमें तो गैस बाकी थी... मेरे यहाँ लगा दी... वैसे भी तुम वहाँ जली रोटी तो खा ही आए थे..."

बस...

श्रीमती ने "खा ही आए थे..." ये सुना ... ये नहीं कि कैसी थी...।

उसके बाद क्या हुआ... वो मैं नहीं सुना सकता..... देश में गैस का संकट...और मेरे घर में मेरा।

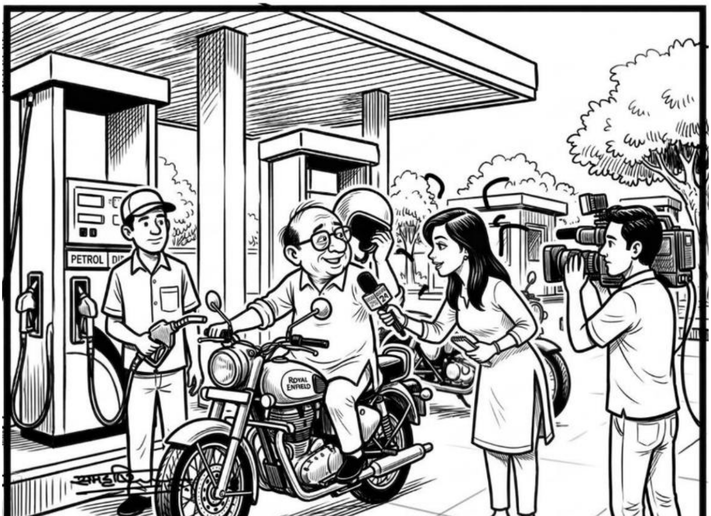

कीमत बढ़ी... तकलीफ हुई... पर आपने इंटरव्यू लिया... बस राहत हो गई....

शादी, शंका और 'गैस' का गणित

शादी, शंका और 'गैस' का गणित

"साहब, आजकल शादियों में प्रवेश करते ही लोग फूलों की बारिश और शहनाई की धुन सुनते हैं, पर हमारे कान तो उस 'छन्न-छन्न' की आवाज पर लगे होते हैं जो कड़ाही के पास से आती है। अब जमाना बदल गया है! पहले हम कार्ड देखते ही ये सोचते थे कि पहनना क्या है, अब कार्ड हाथ में आते ही कैलकुलेटर बाहर आ जाता है कि भाई, 'रिटर्न ऑन इन्वेस्टमेंट' (ROI) क्या रहेगा?

पड़ोसी मुल्क में तो खबर उड़ गई कि 'एक ही डिश' मिलेगी। साहब, ये सुनकर हमारे यहाँ के बारातियों में ऐसा कोहराम मचा कि लोग सूट-बूट छोड़कर पीटी (PT) करने लगे हैं ताकि प्लेट हाथ में आते ही सबसे पहले 'अटैक' कर सकें। अब लिफाफा 'नेक' नहीं रहा, अब ये 'परफॉर्मेंस बेस्ड बोनस' बन गया है। मेरा तो सीधा हिसाब है—पनीर के टुकड़ों की गिनती कम हुई, तो लिफाफे से गांधी जी के दर्शन भी कम होंगे!

और हम? हम ठहरे 'फर्स्ट डे, फर्स्ट शो' वाले पक्के खिलाड़ी। दुनिया अभी पार्लर में चेहरा चमका रही है, हम बारात घर के पिछले दरवाजे से रसोइए की 'किस्मत' चमकाने पहुँच गए। लोग स्टेज पर जाकर दूल्हे को प्लास्टिक की मुस्कान दे रहे थे, हम बैकस्टेज रसोइए को असली वाली 'दक्षिणा' थमा रहे थे।

रसोइया सकपका कर बोला—'साहब, अभी तो चूल्हा भी नहीं जला, आप तो परिवार समेत आ धमके!' मैंने कहा—'भाई, हम उस जमाने के हैं जो फिल्म का राष्ट्रगान शुरू होने से पहले सीट पर रुमाल रख देते थे। हमें पता है ये डिजिटल इंडिया है, यहाँ कब गूगल मैप 'ट्रैफिक' दिखा दे और कब तुम्हारी 'गैस' खत्म हो जाए, कोई भरोसा नहीं! तेरा ये गैस सिलेंडर और मेरा ये लिफाफा... दोनों का प्रेशर बना रहना चाहिए।'

मैंने उसकी जेब में चुपके से 'एक्स्ट्रा चार्ज' सरकाया और बस इतना कहा—'देख दोस्त, जैसे ही मैच शुरू हो, बस अंपायर की तरह उंगली उठा देना... मैं समझ जाऊँगा कि कड़ाही से पहली पूड़ी की 'डिलीवरी' होने वाली है!'

साहब, तकनीक कितनी भी स्मार्ट हो जाए, लेकिन भारत में असली '5G' तो रसोइए का वो एक 'इशारा' ही है जो बता देता है कि बस अब 'सर्जिकल स्ट्राइक' का वक्त आ गया है। गूगल आपको ढाबे का रास्ता दिखा सकता है, लेकिन शादी के बुफे में पनीर का 'कन्फर्म टिकट' तो वही गुप्त दक्षिणा ही दिलवाती है!"

गूगल मैप्स और 'गैस' का संकट

गूगल मैप्स और 'गैस' का संकट

आजकल चर्चा है कि गूगल ने मैप्स के अंदर Gemini AI फिट कर दिया है। अब बेचारा Gemini भी परेशान है।

पहले तो वह सिर्फ रास्ता बताता था, अब उसे यह भी बताना पड़ेगा कि जिस ढाबे पर आप जा रहे हैं, वहाँ चूल्हा जल रहा है या वेटर 'अभी चढ़ाया है साहब' बोलकर आधा घंटा बिठाने वाला है।

मैंने सर्च किया: "आसपास कौन सी होटल है जहाँ भरपेट भोजन मिलेगा?"

Gemini AI भी सोंच में पड़ गया: "भैया, 'भरपेट' का एल्गोरिदम तो मेरे पास भी नहीं है। इंसानी पेट की भूख और रसोइए की नीयत, दोनों ही मेरी कोडिंग से बाहर हैं।"

फिर गूगल मैप्स ने बड़ी मासूमियत से एक डिस्क्लेमर चमका दिया: "सावधानी: होटल तो खुला है, पर रसोई में गैस उपलब्ध है या नहीं, इसकी पुष्टि हम नहीं कर सकते। मुमकिन है कि आप वहाँ पहुँचें और पता चले कि हलवाई 'डिलीवरी' आने का इंतज़ार कर रहा है। कृपया अपनी जोखिम पर ही भूख बढ़ाएं!"

अरे भाई Gemini!.... जब तुम ये नहीं बता सकते कि कड़ाही चढ़ी है या नहीं, तो ये सतरंगी मैप दिखाने का क्या फायदा?

हमें सैटेलाइट व्यू नहीं, 'तवे का व्यू' दिखाओ!

हमें ये मत बताओ कि..... ट्रैफिक लाल है, ये बताओ कि.... दाल में तड़का लाल (मिर्च वाला) लगेगा या नहीं?

हमारे यहां डिजिटल युग की कड़वी सच्चाई ही ये है:

- गूगल मैप्स यह बता देगा कि "यहाँ से 5 मिनट की दूरी पर श्रेष्ठ भोजन उपलब्ध है।"
- पर कहीं ऐसा न हो कि वहां जाओ और जवाब मिले... "गैस खत्म है भाईसाहब, अभी छोटा सिलेंडर मंगवाया है, 20 मिनट रुकना पड़ेगा।"

साथियों तकनीक कितनी भी 'स्मार्ट' हो जाए, लेकिन भारत में असली 'सर्च इंजन' तो वही है जो नाक से सूंघकर बता दे कि किस ढाबे पर कचौड़ियाँ ताजी छन रही हैं।

गूगल के पास डेटा हो सकता है, पर हमारे पास 'अनुभव का डिस्क्लेमर' जो है!

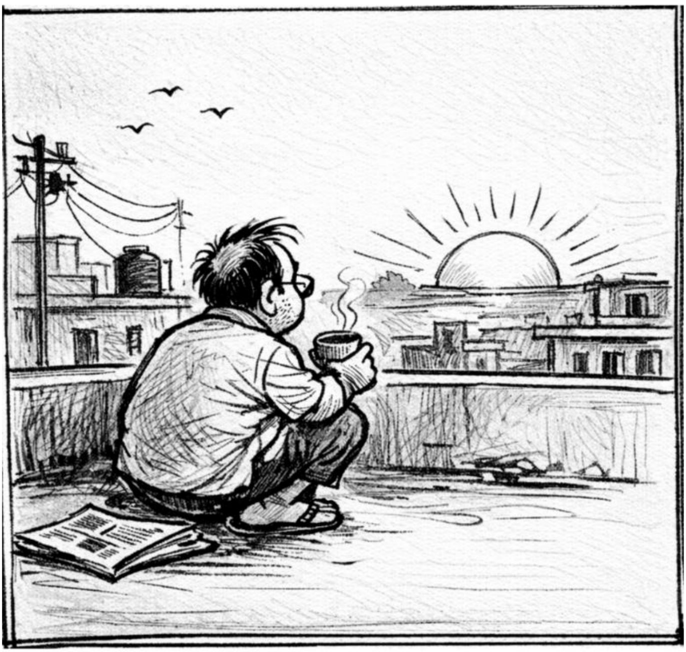

घर की संसद

हमें बोलने नहीं दिया जाता - विपक्ष
समाचार
न न... मैं तो बोलता ही... तुम्हारे रिमोट कण्ट्रोल से... बिना इसके मुँह ही नहीं खोला...

घर की संसद

आज टीवी पर संसद की बहस चल रही है। विपक्ष पूरे जोश से चिल्ला रहा है— “हमें बोलने नहीं दिया जाता… हमारे साथ पक्षपात हो रहा है.....!”

मैं बड़े ध्यान से बहस देख रहा हूँ। लोकतंत्र की चिंता मुझे भी सताने लगी। ऐसा भी कहीं होता है..?

इतने में श्रीमती जी ने रिमोट मेरे हाथ से लिया और घूरते हुए देखने लगी....।

मेरे भीतर का लोकतंत्र अचानक शांत हो गया। मैंने हाथ जोड़ते हुए विनम्रता से कहा— “न न… मैं तो बोलता ही… तुम्हारे रिमोट कंट्रोल से… कसम से बिना इसके मुँह ही नहीं खोलता…”

तभी मुझे लोकतंत्र का एक नया सिद्धांत समझ में आया—

संसद हो या घर, रिमोट जिसके हाथ में… आवाज़ उसी की होती है। 😄

पेट्रोल के दाम और मेरी खटारा साइकिल

पेट्रोल के भाव.... अरे ले देकर एक खटारा साइकिल है तुम्हारे पास...

पेट्रोल के दाम और मेरी खटारा साइकिल

सुबह-सुबह मैं मोबाइल लेकर उकड़ू बन बैठा था।

एक हाथ सिर पर, दूसरे हाथ में मोबाइल। चेहरे पर वही भाव जैसे अभी-अभी किसी ने बताया हो कि कल से सूरज भी टैक्स देने पर उगेगा।

सोशल मीडिया पर खबर चल रही थी —

"मिडिल ईस्ट में तनाव… पेट्रोल-डीजल के दाम बढ़ सकते हैं…"

मेरा माथा सिकुड़ गया।

मुझे लगा जैसे खाड़ी के तेल के कुएँ सीधे मेरे ही आँगन में फूट पड़े हों और दाम बढ़ने का बिल सबसे पहले मेरे नाम ही आने वाला हो।

तभी पीछे से पत्नी झल्लाती हुई बोली —

"काहे सिर पकड़ के बैठे हो? कोई काम है कि नहीं..."

मैं बोला —

"देखो न… लोग कह रहे हैं पेट्रोल-डीजल के दाम बढ़ने वाले हैं।"

पत्नी ने एक नज़र मेरे मोबाइल पर डाली, दूसरी नज़र कोने में खड़ी जंग लगी साइकिल पर।

फिर बोली —

"अरे हमारे पास ले-देकर एक पुरानी साइकिल है, जो बिना पेट्रोल के चलती है।

रसोई गैस की चिंता करो तो कुछ समझ भी आए।"

थोड़ी देर रुककर फिर उसने ताना मारा —

“और वो मुवा ट्रम्पवा क्या तुमसे पूछने आएगा कि

‘भैया, भाव बढ़ाऊँ कि नहीं?’”

मैंने फिर मोबाइल देखा…

फिर साइकिल देखी…

और मन ही मन सोचा सच है —

“सोशल मीडिया की अफवाहें दौड़ती हैं तब

आदमी भी सुधबुध खो बैठता है, कि जिसकी चिंता कर रहा है वो उसके पास है भी कि नहीं”

मैंने अपनी साइकिल उठाई और निकल गया सब्ज़ी लेने..

झा भाई.... तुमने कहा... तुम तेल लेकर जा रहे हो... ये किसको नहीं बताना है....

आंगन प्रीमियर लीग

आंगन प्रीमियर लीग

आजकल क्रिकेट मैच का मौसम है. कभी महिला क्रिकेट T20 तो कभी पुरुष T20.

मैंने श्रीमती को ऑफर दिया. महिलाएं और पुरुष अलग अलग क्रिकेट खेलते हैं क्यों न हम जॉइंट मैच खेले?

श्रीमती ने थोड़ी देर सोंचते हुए कुटिल मुस्कान लिए हामी भरी. उसकी कुटिल मुस्कान को भी मैंने सर-आँखों पर लिया.

घर के आंगन में ही रौशनी की व्यवस्था की गई.

ननकू आया अकेले अकेले.... मैंने कहा "भाई देख आज हमने क्रिकेट में एक कीर्तिमान स्थापित करने की योजना बनाई है जिसमे, पुरुष और महिला की संख्या बराबर हो. एक काम कर भाभीजी को भी बुला ले"

उसकी हिम्मत नहीं हुई उसकी ही श्रीमती को बुलाने की. उसने कहा "चल मैं रनिंग कमेंट्री ही कर लूंगा...."

वो ठहरा नेता टाइप... माइक हाथ में आते ही शुरू....

नमस्कार दोस्तों, आज के इस ऐतिहासिक 'आंगन प्रीमियर लीग' के सीधे प्रसारण में आप सभी का स्वागत है। मैदान सज चुका है, रोशनी की चकाचौंध है और हमारे सामने है वह कुख्यात नीला ड्रम, जो आज स्टंप्स की भूमिका में अपनी पूरी गरिमा के साथ खड़ा है।

मैच की शुरुआत ही इतनी रोमांचक रही कि श्रीमती ने सिक्का इतनी ज़ोर से उछाला कि वो सीधा नाले की गहराई नापने चला गया, मानो अपनी किस्मत का फैसला भी उसी गंदगी में बह गया हो।

अगर दूसरे सिक्के की नियति भी ऐसी ही रही तो घर की अर्थव्यवस्था पर आपातकाल लग जाएगा। इससे अच्छा मैंने कूटनीतिक निर्णय लिया।

मैं बोला — "रहने दीजिए... आप ही फैसला कर लीजिए।"

वो मुस्कुराईं।

वही मुस्कान... जिसमें लोकतंत्र भी होता है और परिणाम भी।

उन्होंने कहा — "मैं पहले गेंदबाज़ी करूँगी।"

जब श्रीमती जी ने गेंद संभाली, तो उनके चेहरे के हाव-भाव देखकर मुझे वेस्ट इंडीज के उस दौर की याद आ गई जब मैल्कम मार्शल बल्लेबाजों के दिलों में खौफ भर दिया करते थे।

पहली ही गेंद सीधे मेरे सर को निशाना बनाकर आई और कानों में गूंजी वह चेतावनी—"यह वैलेंटाइन पर गिफ्ट न देने का नतीजा है!" अभी मैं उस झटके से उबर भी नहीं पाया था कि अगली गेंद ने तो इतिहास ही रच दिया। मैंने पूरी ताकत से बल्ला घुमाया, पर अफ़सोस, बल्ला दो हिस्सों में ऐसा बंटा कि हत्था मेरे हाथ में रह गया और बाकी का भारी-भरकम हिस्सा रॉकेट की रफ़्तार से बाउंड्री के पार सीधे बेचारे ननकू के सर पर जा उतरा।

ननकू दीवार के पीछे से अपना सर सहला रहा है और श्रीमती जी की मुस्कुराहट बता रही है कि अभी तो कई त्योहारों और सालगिरहों का हिसाब चुकता होना बाकी है। यह मैच अब सिर्फ क्रिकेट नहीं रह गया है, यह एक 'घरेलू हिसाब-किताब' बन चुका है जहाँ अंपायर भी वही हैं, गेंदबाज भी वही हैं और नियम भी पल-पल उन्हीं की सुविधा के अनुसार बदल रहे हैं। अब तो बस यही दुआ है कि अगला ओवर खत्म होने तक यह नीला ड्रम और मेरा वजूद, दोनों सुरक्षित रहें।

मैदान पर सन्नाटा छा चुका है, टूटे हुए बैट का एक हिस्सा अभी भी ननकू के आंगन में पड़ा है और नीला ड्रम अपनी जगह पर अडिग खड़ा इस तबाही का गवाह बना हुआ है। कमेंटेटर (ननकू) माइक लेकर हारने वाले कप्तान, यानी मेरे पास आता है।

"तो महोदय, आज के इस करारी और दर्दनाक शिकस्त पर आपका क्या कहना है? टॉस हारने से लेकर बैट टूटने तक, आपकी रणनीति कहाँ चूक गई?"

मैंने एक गहरी सांस ली, फटे हुए दस्तानों को ठीक किया और कहा...."देखिए, पिच पर घास नहीं थी, पर श्रीमती जी की आँखों में जो अंगारे थे, उन्होंने अच्छे-अच्छों को 'क्लीन बोल्ड' कर दिया होता। मैच तो हम उसी वक्त हार गए थे जब सिक्का नाले में गिरा और हमने बिना शर्त गेंदबाजी थमा दी। मार्शल वाली वो पहली गेंद सीधे दिल और दिमाग पर लगी, जिसने ये साफ़ कर दिया कि आज वैलेंटाइन का उधार ब्याज समेत वसूला जाएगा।"

जब मुझसे पूछा गया कि मेरे यानी ननकू के सिर पर बैट लगने से क्या टीम के मनोबल पर असर पड़ा, तो मेरा जवाब था...."ननकू भाई आप तो बस एक 'कोलैटरल डैमेज' हो। असली निशाना तो मैं ही था, वो तो भला हो उस नीले ड्रम का जिसने तीसरी गेंद पर मुझे 'बोल्ड' करके मैदान से सम्मानजनक विदाई दिला दी, वरना अगली गेंद तो शायद मेरी एनिवर्सरी वाली भूल पर थी, जो सीधे स्टंप्स नहीं, घर के कागजों पर लगती!"

श्रीमती जी को 'प्लेयर ऑफ द मैच' घोषित किया गया, जिन्हें इनाम के तौर पर एक नया 'ऑनलाइन शॉपिंग वाउचर' दिया गया। उन्होंने ट्रॉफी (जो कि वास्तव में किचन का एक नया चमचमाता लोटा है) उठाते हुए साफ़ कह दिया है कि अगला मैच 'मदर्स डे' की सुबह खेला जाएगा।

मैच की हार के बाद असली सजा का वक्त अब आ चुका है। मैदान की धूल झाड़कर, टूटे हुए बल्ले का हत्था एक तरफ रखकर, अब हारी हुई टीम यानी

मुझे 'रसोई घर' के उस क्रीज पर तैनात कर दिया गया है जहाँ न तो कोई 'फ्री हिट' है और न ही कोई 'नो बॉल'।

श्रीमती जी अब अंपायर की कुर्सी से उठकर सोफे पर विराजमान हैं, और उनका आदेश आ चुका है...."चूंकि आप मैच और टॉस दोनों ही बुरी तरह हारे हैं, इसलिए आज की 'डिनर ट्रॉफी' आप ही तैयार करेंगे।" रसोई की दहलीज लांघते ही मुझे अहसास हुआ कि यहाँ की पिच आंगन से कहीं ज्यादा चुनौतीपूर्ण है। मसालों के डिब्बे किसी क्षेत्ररक्षक (fielder) की तरह मुझे घूर रहे हैं और प्रेशर कुकर की सीटी किसी तीखी स्लेजिंग की तरह बजने को बेताब है।

मैंने मन ही मन सोचा, कहाँ मार्शल की गेंदों से बच रहा था और कहाँ अब अदरक और लहसुन के 'बाउंसर' झेलने पड़ रहे हैं। चाकू हाथ में लेते ही मुझे ननकू के सिर की याद आ गई और मैंने बहुत सावधानी से प्याज काटना शुरू किया, कहीं यहाँ भी कोई 'हिट विकेट' न हो जाए। कड़ाही में तेल गरम होते ही ऐसी आवाज़ आई जैसे स्टेडियम में दर्शकों ने शोर मचाया हो, पर यहाँ दर्शक सिर्फ एक हैं, जो हॉल से आवाज़ लगा रही हैं...."नमक कम मत रखना, वरना अगला मैच 'पिंक बॉल' से होगा!"

इस रसोई-प्रवास के बीच मुझे समझ आया कि आंगन का नीला ड्रम तो फिर भी खामोश था, यहाँ की चाय की केतली और तवा तो सीधे 'कमेंट्री' कर रहे हैं। हार की थकान और प्याज के आंसुओं के बीच बस एक ही उम्मीद है कि अगर आज का खाना ठीक-ठाक बन गया, तो शायद अगली बार टॉस के लिए नया सिक्का खरीदने की इजाजत मिल जाए।

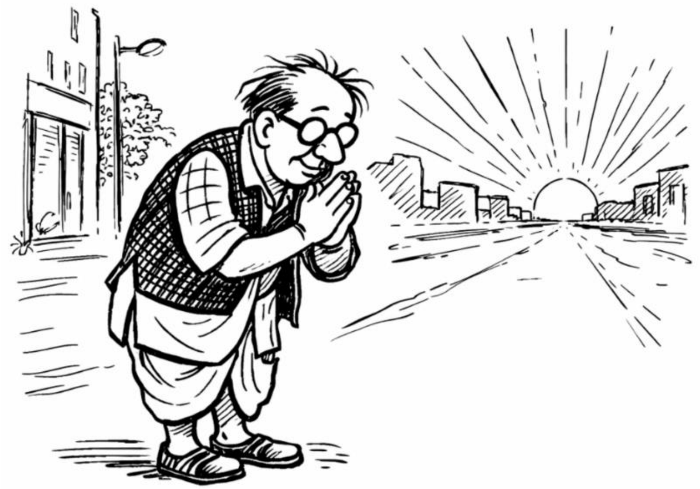

बुलेट ट्रेन और हमारा 'देसी' मिजाज़

ए ...... बस पांच मिनट रुक जाना हों थोड़ा.....

बुलेट ट्रेन और हमारा 'देसी' मिजाज़

साथियों!

आज हमारे योगीजी ने जापान में बुलेट ट्रैन में सवारी की| लगता है अब ये लोग लाकर ही मानेंगे| सुना है विकास की रफ़्तार इतनी तेज होगी कि आप घर से चाय पीकर निकलेंगे और पकोड़े खाने के लिए सीधे अहमदाबाद उतरेंगे। मेरा मन घबरा रहा है। कुछ शंकाएं हैं जिनका समाधान भी आवश्यक है.

मैं सोच रहा हूँ कि जब हमारी कुछ शानदार 'भारतीय आदतें' इस 320 km/h की रफ़्तार वाली मशीन से टकराएंगी, तो मंजर क्या होगा?

हमारे ननकू भाई को ही ले लीजिए। उनका तो उसूल है....जब तक रेल का कान (हैंडल) पकड़कर इंजन पर न चढ़ें, तब तक आंदोलन सफल नहीं माना जाता। अब बुलेट ट्रेन का इंजन तो आगे से इतना नुकीला और चिकना है कि ननकू भाई उस पर चढ़ने की कोशिश करेंगे, तो फिसलकर सीधे पटरी के किनारे गिरेंगे और कहेंगे...."अरे भाई, ये ट्रेन है या कोई गीली साबुन की टिकिया?" आंदोलन करने के लिए अब उन्हें नारे लगाने की नहीं, बल्कि फेविकोल लगाकर चिपकने की ट्रेनिंग लेनी पड़ेगी!

और भाई साहब, वह जो 'रेल की पटरियों वाला सुकून' है, उसका क्या? हम तो वो लोग हैं जिन्हें जब तक रेल खड़ी न हो, तब तक हाजमोला भी काम नहीं करता। अब सोचिए, बुलेट ट्रेन के पीछे आप अभी लोटा लेकर बैठने का विचार ही करेंगे, कि पीछे से हवा का ऐसा झोंका आएगा कि आप सीधे अगले जिले के खेत में लैंड करेंगे। वहाँ 'निवृत्त' होने का समय नहीं मिलेगा, सीधे 'निर्वाण' प्राप्त हो जाएगा!

बाथरूम की तो पूछिए ही मत। बुलेट ट्रेन के शानदार कांच वाले टॉयलेट में जब हम घुसेंगे और वहाँ उस "चैन से बंधे लोटे" को नहीं पाएंगे, तो हमें अपनी

संस्कृति खतरे में लगने लगेगी क्योंकि चैन से बंधा लौटा ऐसे देखता है जैसे भूखा कुत्ता किसी रोटी को। बेचारा लोटा, जो आज तक हमें ललचाई नज़रों से देखता है कि कोई तो मुझे आज़ाद कराएगा, बुलेट ट्रेन में शायद 'म्यूजियम' का हिस्सा बन जाए। वहां तो वैक्यूम टॉयलेट होंगे....बटन दबाते ही सब साफ़! हम लोग तो बटन दबाने के बाद भी 5 मिनट खड़े होकर इंतज़ार करेंगे कि 'आवाज़' क्यों नहीं आई?

हमारे फेरीवाले भाई! "चाय... गरम चाय..." की आवाज़ बुलेट ट्रेन में ऐसे सुनाई देगी जैसे कोई लड़ाकू विमान पास से गुज़रा हो। खिड़की से बाहर हाथ निकालकर वेंडर से समोसा लेना अब 'सुसाइड मिशन' होगा। समोसा आपके हाथ में आने के बजाय शायद सीधे आपके फेफड़ों को चीरता हुआ निकल जाए।

अंत में बस इतना ही कहूँगा...

बुलेट ट्रेन तो आ जाएगी, पटरियां भी बिछ जाएंगी, लेकिन हमारे ननकू भाई का जज्बा और उस लोटे की वफ़ादारी का क्या होगा? रफ़्तार तो जापान वाली मिल जाएगी, पर क्या हमारा 'हाजमोला' उस रफ़्तार को झेल पाएगा? यह एक बड़ा सवाल है!

ओ पहलवान.... कहीं हड्डी वड्डी टूट गई तो...

जांच का राष्ट्रीय और घरेलू मॉडल

जांच का राष्ट्रीय और घरेलू मॉडल

देवियों और सज्जनों, देश में इस समय दो प्रमुख जांचें चल रही हैं।

एक ....शराब घोटाले में।

दूसरी ....मेरे घर में।

टीवी पर एंकर गरज रहे हैं — "अदालत ने तल्ख टिप्पणी की है… CBI केस को हाई कोर्ट अपील करेगी……"

मैंने सोचा — वाह! न्यायपालिका जाग गई है।

तभी मेरी नज़र टेबल पर रखे एक गिलास पर पड़ी।

बिलकुल अकेला।

निर्दोष-सा।

पर संदिग्ध....।

मैं अभी अपने मन में कल रात की घटना का "केस क्लोज़" लिख ही रहा था कि दरवाज़े के पास चाबियों की खनक सुनाई दी।

साथियों....वो एंट्री थी — गृह जांच एजेंसी की।

श्रीमती जी अंदर आईं।

चेहरे पर वही संयत गंभीरता जो अदालत की तल्ख टिप्पणी में होती है।

उन्होंने पहले मुझे देखा।

फिर टेबल पर रखे गिलास को।

कुछ नहीं बोलीं।

सीधे अलमारी की ओर बढ़ीं।

अलमारी खोली।

एक-एक गिलास को ऐसे देखा

जैसे चार्जशीट पढ़ रही हों।

और जिन गिलासों को मैंने बड़ी सफ़ाई से चुपचाप धोकर रख दिया था — उनके किनारों पर जमी हल्की-सी नमी उनकी नज़र से बच न सकी।

उन्होंने उँगली से बूंद छुई, मुस्कुराईं… और बोलीं — “मेरी गैर-हाज़िरी में कुछ गड़बड़ हुई है…”

उस क्षण मुझे समझ आया —

देश में CBI है, घर में SBI ....Shrimati Bureau of Investigation.

देश में CBI सबूत ढूँढती है, घर में श्रीमती सबूत ही सूंघ लेती हैं।

मैंने धीमे से कहा — “वो… पानी था…”

उन्होंने बिना पलक झपकाए जवाब दिया — “सीबीआई ने तो कमी-पेशी छोड़ी वो छोड़ी… यहाँ कोई ढिलाई बर्दाश्त नहीं होगी।”

देवियों और सज्जनों, देश में जांच सालों चलती है।

घर में फैसला मिनटों में आ जाता है।

और मैं…

कॉमन मेन…

अपील का अधिकार खोजता रह जाता हूँ। 😄

सुन..... इनके बुध और गुरु Work from Home.... ये घर में ... तो तुम्हारी वो दिन छुट्टी...

प्रजातंत्र का 'पारदर्शी' प्रदर्शन

प्रजातंत्र का 'पारदर्शी' प्रदर्शन

आज के दौर में विरोध जताने के लिए 'कलेजा' होना जरूरी नहीं है, बस एक अदद 'बनियान' होनी चाहिए— भले ही वह मकड़ी के जाले की तरह झीनी क्यों न हो।

विपक्ष का काम है उतारना—कभी मुद्दे, कभी मुखौटे और कभी कार्यकर्ताओं के कपड़े। ननकू ठहरा मंझा हुआ खिलाड़ी, जिसे पता है कि भीड़ जुटाने का सबसे छोटा रास्ता पेट से होकर गुजरता है। उसने कहा झा भाई... चलो आज तुम्हें दिखाता हूँ मेरा वट... और खाने की व्यवस्था भी पक्की. उसने वादा किया 'खाने' का, और बदले में मांग ली 'इज्जत' (सफेद शर्ट के रूप में)। मैं बेचारा आम आदमी...! मुझे लगा कम से कम पेट तो भरेगा, पर क्या पता था कि मैं अपनी फटी बनियान के जरिए 'गरीबी का ग्लोबल विज्ञापन' बन जाऊंगा.

मैं उत्साह में गया, लोकतंत्र के नाम पर शर्ट भी उतारी, नारे भी लगाए… और खाने की लाइन में जब पहुँचा तो पता चला— यहाँ AI SUMMIT में 'AI' का मतलब "आश्वासन इंटेलिजेंस" था। खाना अभी "प्रोसेसिंग" में है।

खैर शाम को घर लौटा तो पत्नी का चेहरा ऐसा था जैसे संसद में विपक्ष का माइक बंद हो गया हो। पत्नी बोली— "तुम्हें ज़रा भी शर्म नहीं आई? तुमने मेरा प्रदर्शन कर दिया!"

मैंने लोकतांत्रिक ढंग से पूछा—"वो कैसे?" पत्नी ने शर्ट के अंदर झाँककर फटी बनियान की तरफ इशारा किया।

पत्नी बोली— "देश के सामने तो तुमने अपनी शर्ट उतारी… पर असलियत ये है कि घर के सामने रोज़ मेरी इज़्ज़त उतरती है। तुम्हारी बनियान देखकर पड़ोसन समझती है मैं 'मिनिमम सपोर्ट प्राइस' पर पति को चला रही हूँ।"

अब समझ आया— देश में प्रदर्शन दो तरह के होते हैं: एक जो सरकार को दिखाने के लिए होते हैं… और एक जो घर में बिना प्रेस कॉन्फ्रेंस के हो जाते हैं।

AI SUMMIT में नेताओं ने शर्ट उतारी थी ताकि भविष्य की चिंता दिखाई दे। घर में पत्नी ने बनियान दिखाई ताकि वर्तमान की सच्चाई समझ में आए।

ननकू ने कहा था खाना मिलेगा, पर ये नहीं बताया था कि उस खाने की कीमत 'बनियान के छेद' गिनवाकर चुकानी होगी।

राजनीति में जब नेता कपड़े उतारता है, तो वह 'त्याग' की सुर्खी बनता है; पर जब गरीब आदमी शर्ट उतारता है, तो उसकी बनियान के छेद उसकी गरीबी का 'लाइव टेलीकास्ट' कर देते हैं।

तकनीक चाहे जितनी आगे बढ़ जाए, घर की अर्थव्यवस्था का एल्गोरिद्म अभी भी पत्नी के पास है। और उसमें एक ही चेतावनी आती है—

“अपडेट योर बनियान…वरना अगला प्रदर्शन घर के अंदर होगा।”

साझा सवारी को बढ़ावा दें.. मोदी
मरवाएगा बीवी है मेरी..
स्वप्नदृष्टि
वाह झा बाबू... रोज़ अलग अलग साझा सवारी.... वाकई में.....

अदालत, दाना, कबूतर और पंचवर्षीय तृप्ति

देख झा भाई .... चोंच व्यस्त है... और पंख बेरोज़गार

अदालत, दाना, कबूतर और पंचवर्षीय तृप्ति

अदालत ने एक चिंता व्यक्त की है।

वैसे अदालत का काम ही चिंता व्यक्त करना है। वह व्यक्त करती रहती है....कभी पर्यावरण पर, कभी व्यवस्था पर, और अब फ्री बीज़ पर।

फ्री बीज़… यानी वो दाना जो समय समय पर जनता नामक कबूतर के सामने बिखेर दिया जाता है।

अब अदालत की चिंता अपनी जगह है। उसे लगता है कि अगर कबूतर को यूँ ही दाना मिलता रहा तो वह उड़ना भूल जाएगा। पर अदालत शायद यह नहीं जानती कि हमारे लोकतंत्र में कबूतर उड़ते कम, गुटरगूं ज़्यादा करते हैं।

नेता की अपनी समस्या है। वह सोचता है ....“यदि दाना नहीं डालूँगा तो कबूतर फँसे कैसे? और अगर कबूतर फँसे नहीं तो जाल किस पर डालूँगा? और जाल नहीं डालूँगा तो चुनावी मछलीघर में तैरूँगा कैसे?”

उधर कबूतर यानी हम — हम भी कम तर्कशास्त्री नहीं हैं। हम सोचते हैं....“दाना नहीं चुगेंगे तो पंचवर्षीय तृप्ति कैसे मिलेगी? पाँच साल में एक बार पेट भरने का राष्ट्रीय पर्व जो होता है!”

असल में यह दाना बड़ा दार्शनिक है। यह पेट से पहले उम्मीद भरता है। और उम्मीद से पहले घोषणा-पत्र।

नेता दाना डालता है। कबूतर चुगते हैं। फिर पाँच साल तक वही कबूतर बिजली-पानी-रोज़गार की छतों पर बैठकर गुटरगूं करते रहते हैं। नेता तब तक अगली बोरी की व्यवस्था में लग जाता है।

अदालत फिर चिंता व्यक्त करती है। कहती है ....“लोकतंत्र आत्मनिर्भर होना चाहिए।”

कबूतर सहमति में गर्दन हिलाते हैं — पर चोंच दाने से हटती नहीं।

दरअसल समस्या फ्री बीज़ की नहीं है। समस्या यह है कि हम दाने को अधिकार नहीं, अवसर समझते हैं — और अवसर को स्थायी नीति।

नेता सोचता है — "दाना डालो, कबूतर बाँधो।"

कबूतर सोचता है — "दाना खाओ, पाँच साल काटो।"

और लोकतंत्र सोचता है — "कभी तो ये दोनों उड़ना सीखेंगे।"

पर तब तक… चिंता व्यक्त होती रहेगी, दाना बिखरता रहेगा, और हम सब अपनी-अपनी पंचवर्षीय तृप्ति की प्रतीक्षा में गुटरगूं करते रहेंगे।

नमस्ते
छोटे सरकार

साहब का AI और सुदामा की झाड़ू

साहब का AI और सुदामा की झाड़ू

साथियों, आज सुबह अख़बार में खबर पढ़ी. खबर थी AI से काम का समय आधा हो जाएगा जिससे दुगुना काम कर सकते हैं. हमारा पड़ौसी छुटभैया नेता जो गली में तो नेतागिरी करता फिरता है पर घर में.... वो आया मेरे पास और मासूमियत से बोला... झा जी.... AI क्या स्वर्ग से उतरने वाली कोई अप्सरा है जो हमारे सारे दुख हर लेगी और हमारे घर के जो काम गृहमंत्री ने दिए होते हैं वो कर ले?

मैं भी सोंचने पर मज़बूर हुआ कि ज़रा 'कॉमन मैन' की फटी हुई एड़ियों को देखिए जो दिन भर दफ़्तर में फाइलों से कुश्ती लड़ता है और घर आकर झाड़ू-पोछा थाम लेता है।

अजीब विडंबना है! दुनिया कह रही है कि AI आने से काम आधा रह जाएगा और फुर्सत दुगुनी हो जाएगी। लेकिन हकीकत तो यह है कि यह तकनीक उस 'साहब' के लिए है जो मखमली सोफे पर बैठकर "स्मार्ट वर्क" की डफली बजाता है।

अमीरों के लिए AI: "सिरी, मेरे लिए शैम्पेन ऑर्डर करो।"

आम आदमी के लिए AI: वह फोन में विज्ञापन देखता है...."घर बैठे करोड़पति कैसे बनें?" और फिर चुपचाप उठकर जाकर बर्तन मांजने लगता है।

आम आदमी, जिसका पूरा वजूद ही पसीने से लिखा गया है..उसके लिए तो काम आधा होने का मतलब है कि मालिक अब उससे दुगुना काम लेगा। अगर मशीन ने एक घंटे का काम दस मिनट में कर दिया, तो बाकी के पचास मिनट में उसे चैन से बैठने थोड़ी दिया जाएगा, बल्कि पाँच नए काम और......।

AI कविता लिख सकता है, पेंटिंग बना सकता है, यहाँ तक कि आपके लिए प्रेम पत्र भी लिख सकता है। लेकिन यह थके हुए बाप के हाथों से झाड़ू नहीं थाम सकता है. यह रसोई के सिंक में पड़े उन बर्तनों को साफ़ नहीं कर सकता है जिन्हें देखकर आम आदमी की कमर पहले ही जवाब दे जाती है. यह 'डिजिटल बुद्धि' अभी इतनी 'बौद्धिक' नहीं हुई कि उसे पसीने की गंध समझ आए।

आज का AI उस रईस खानदान के बिगड़ैल वारिस जैसा है, जिसे यह तो पता है कि शेयर मार्केट में पैसा कैसे लगाना है, पर यह नहीं पता कि फटे हुए मोजे में टांका कैसे लगता है। यह केवल उन नौकरीपेशा लोगों की 'बपौती' बनकर रह गया है जो अपनी थकान को 'बर्नआउट' कहते हैं। असली थकान तो उस बेचारे की है जो घर की साफ़-सफाई करते-करते थक जाता है और फिर अगले दिन की रोटी के लिए उसी मशीन जैसी दिनचर्या में जुट जाता है।

वह बेचारा तो बस इतना चाहता है कि भाई, तू दुनिया मत बदल, तू मंगल ग्रह पर बस्तियां मत बसा, बस जितना मैं कर सकता हूँ उतना बोझ तू उठा ले ताकि मैं चैन से आधा घंटा अपनी छत को निहार सकूं।

अभी तो AI, 'साहब' की बपौती लग रहा है जो खुद तो नहीं थकता, पर दूसरों को थकाने के नए-नए तरीके ढूंढता रहता है। आम आदमी के लिए AI अभी भी एक ऐसा सपना है जिसे वह टूटी हुई खाट पर सोकर देख रहा है।